

श्रीमद्भगवद् गीता के देव जू
नी वाणी



प्रकाशक :-
डॉ. कल्याण कुम्हारविहारी ट्रस्ट
कल्याण कुम्हार, गीतागोविन्द मार्ग, कुम्हारवाड़ा

श्रीभगवत् रसिकदेव जू की चाणी

सम्पादक :

जमुनादास रसिक कृपाश्रित

नवल कुंज, वृन्दावन

मूल्य : अमूल्य

1

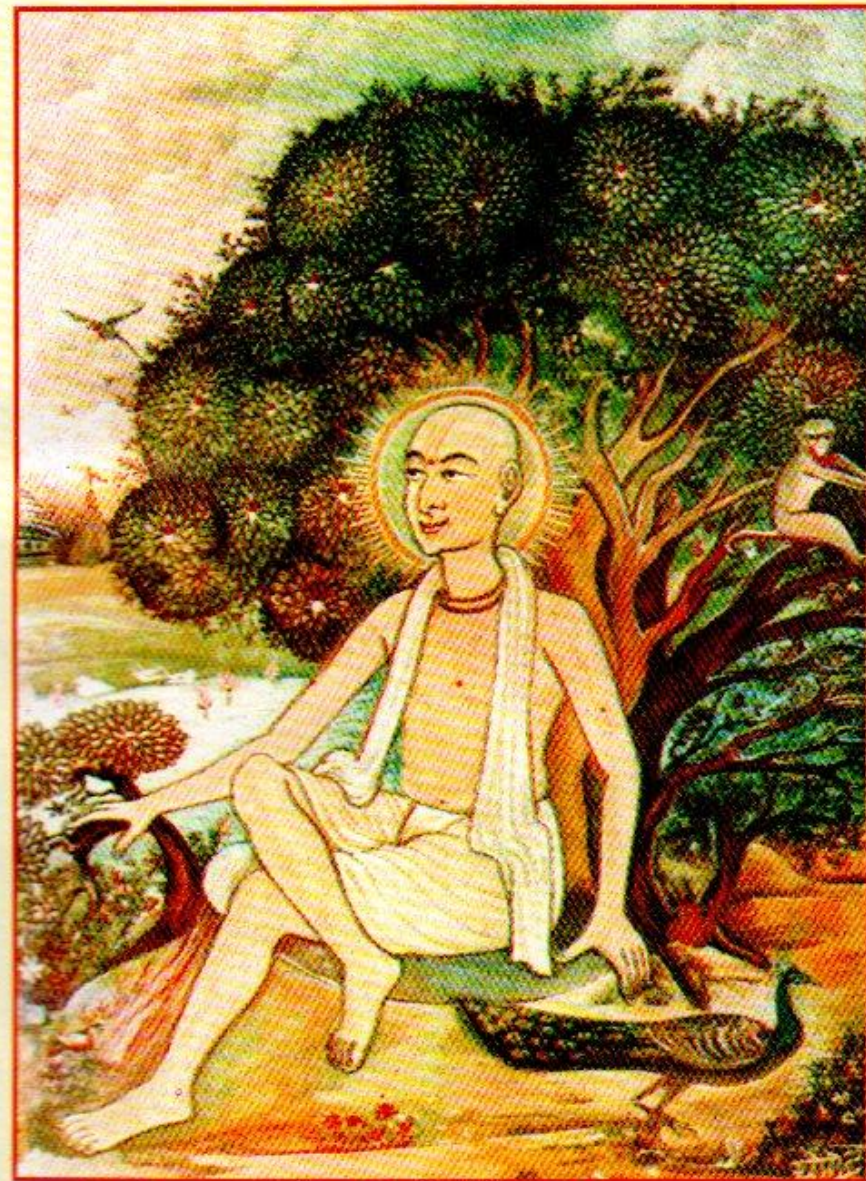
Shyam Anand Sharan

OMAXE

Phone: 9311148620



ठा. श्री बाँकेबिहारी जी महाराज



श्री भगवत रसिकदेव जी महाराज

निपट निदान

(1)

कियो दुख सुख कौ निपट निदान।

(2)

यह रस रसिकन कियो है निदान।

यह रस सुनहु तजि अभिमान॥

श्री स्वामी हरिदास जू महाराज जीवों की अति दुरदशा तथा अगाध दुख समुद्र को देखकर अति द्रवीभूत होकर ऐसे भयंकर कलिकाल में जीवों के कल्याण तथा परम हित व नित्य अखण्ड सर्वोपरि सुख से सुखी करने के लिये इस धराधाम पर प्रगट भये। 95 वर्ष तक यहाँ रहे श्री बाँकेबिहारी जी महाराज को प्रगट कर निज रस रीति तथा प्रीति प्रतीति में निमग्न रहे। कोई बिरले ही बड़भागी जन उनके स्वरूप को समझ पाये।

श्री विहारिनदास जी महाराज ने आपके निज स्वरूप, मत, सिद्धान्त तथा रस को भलीभाँति समझा और अपने निज जनों के हितार्थ निदान कर मार्ग प्रशस्त किया। सभी प्रकार के भय, भ्रम, क्रम तथा श्रमों का निवारण कर सर्वोपरि सुख का प्रकाशन किया। आप श्री हरिदास सम्प्रदाय के धर्म के स्तम्भ माने जाते हैं और रसिकाचार्यों ने आपको 'गुरुदेव' की संज्ञा से अभिषिक्त किया है।

श्री ललितकिशोरी देव जू ने आपकी ही सुन्दर बाणी जी का आधार लेकर आराधना की और प्रसार किया और निरधारित प्रशस्त मार्ग में अति सरलता प्रकाशित की। श्री ललित मोहिनी देव जू तथा उनके विरक्त शिष्यों में अग्रगण्य श्री भगवत रसिक देव जू महाराज ने श्री स्वामी हरिदास जी महाराज और श्री स्वामी विहारिनि दास जी की बाणी को ही अपनी उपासना का आधार बनाकर दृढ़तापूर्वक हृदय में धारण कर अन्त तक निभाया और अगम अद्भुत रहस्यों को अपनी

'बाणी जी' में उल्लिखित कर रसिक अनन्यों को अपना मत, सिद्धान्त तथा रस समझने को बहुत ही सरलता प्रदान कर बहुत बड़ा सहारा देकर अत्यन्त ही परम हित किया है।

वैसे तो आपकी बाणी जन-जन के हित करिवे वारी है सभी परमार्थी सम्प्रदाय के महानुभावों ने पढ़कर समझकर शिरोधार्य की है। सभी को अपनी मनचाही वस्तु की उपलब्धि हुई है। जागतिक लोगों को भी जीने का सहारा मिलता है परन्तु रसिक अनन्य समाज के लिये तो जीवन प्रान है।

कुछ रचना तो ऐसी रहस्यमयी है जिसको समझने की सबके बस की बात नहीं है उनही की कृपा सों ही समझ सकै है। आपकी बाणी में कुछ ऐसे हीरे मोती जड़े भये हैं जिनकी जगमगाहट और झिलमिलाहट से बाणी जी की शोभा नित्य निरन्तर नवीनता लिये बढ़ती रहती है।

मानो कुंजमहल को जाने वाले राजमार्ग के दोनों किनारों पर खड़े भये स्तम्भों में हाई पावर के बड़े-बड़े बल्ब लगे हैं जो अज्ञानान्धकार को मिटाकर ज्ञान का प्रकाश कर रहे हैं। जाने वाले रास्तागीरों को भय, श्रम, तम, क्रम का प्रभाव नहीं व्यापता है।

महाराज ! आपकी हितोभावना की हम सब बलिहारी हैं, कृतज्ञ हैं सदैव जय-जयकार मनाते हैं आपने ऐसी दुर्लभ और अगम्य वस्तु हमारे हस्तामल कर हमको कृतार्थ कर दिया। धन्य है आपकी अहैतुकी कृपा।

करतत्व :-

श्रीहरि ही सकल कर्त्ताओं के कर्त्ता हैं। हमारा श्रीहरि का तात्पर्य श्री कुंजविहारिनि, श्री कुंजविहारी और श्रीहरिदास जू हैं। ये तीनों ही अभेद हैं। ये तीनों ही श्रीहरि हैं। इनही के द्वारा सब कुछ क्रिया होवत रहत हैं। जो श्री स्वामी जी के सच्चे जन हैं वे तो इनही को एकमात्र कर्त्ता मानते हैं और वे

ही कुंजमहल के अधिकारी हैं और जो जन इनके अलावा अन्य काहू देहधारी प्राणी को, अपने को, प्रारलब्ध को, कर्म संस्कार को, काल को तथा माया को कर्त्ता घोषित करते हैं वे ही अहंकारी हैं, अज्ञानी हैं, अपने इष्ट मत से विमुख हैं। संसार के ही सुख में फँसने वाले हैं। श्रीहरि को कर्त्ता मानने वाले ही अपनी वस्तु को प्राप्त करते हैं। देह के अन्दर ही तो श्रीहरि विराजमान हैं देह की ओटक में छिपकर सब कार्य करते रहते हैं वे किसी को नजर नहीं आते हैं देही को करते भये देखकर हम उसी देह को कर्त्ता मान बैठते हैं। यही तो श्रीहरि की नागरता है उनकी कृपा के बिना कौन समझ सकता है। जैसे नट नजर बन्द कर जगत को तमाशा दिखाकर धोखे में डाल देता है।

(1)

कर्त्ता कृत माने नहीं माने निज करतूत।
ते प्राणी दुख पावहीं लग्यो अविद्या भूत॥

लगयो अविद्या भूत कहै द्विज रक्षा करि हौं ।
 अर्जुन मेरौ नाम नहीं पावक में जरिहौं ॥
 कर गहि श्याम बचाय बतायो जो शिशु हरता ।
 भगवत रसिक नरेश सकल कर्तन के करता ॥

(2)

ईश्वर बाजीगर रच्यो जग जेवरी कौ साँप ।
 जीव जमूरा मेलि गल सुर नर मुनि काँप ॥

यह जीव अज्ञानता रूपी नशा में अर्थात् अहंकार रूपी भूत के आवेश में घिरा हुआ है यह अपने निज स्वरूप को भूलकर उनही के बशीभूत होकर तन-मन की क्रिया करता रहता है। भूत रूपी अहंकार का ही आवेश संसार में छाया हुआ है उसी आवेश के बस होकर जीव कर्त्ता श्रीहरि जो कुछ करते हैं उसको तो न समझता है और न मानता ही है केवल अपनी ही क्रिया को सब

कुछ समझता है अपने तन मन से अपना मन भाया करता रहता है मन से संकल्प-विकल्प, भाव, अनुभव, मान-अपमान, हानि-लाभ, दुःख-सुख आदि का चिन्तन करता रहता है और तन से अपनी इच्छानुसार देखना, बोलना, चलना, करना, लेना, देना, कहना-सुनना आदि करता रहता है श्रीहरि के स्वरूप गुण, शक्ति आदि को भूला हुआ रहता है। अर्जुन ने ब्राह्मण के बालक को बचाने का प्रण किया था न बचाने पर चिता में जलने के लिये बैठ गये तब भगवान श्रीकृष्ण ने उनको हाथ पकड़कर चिता से उठाया और बालक को जीवित करवाया श्री भगवत रसिक देव जी का कथन है श्री स्वामी जी महाराज ही सकल कर्त्तान के कर्त्ता हैं।

यह संसार तो बाजीगर का सा खेल है संसार को जेबरी (रस्सी) ही साँप दिखाई देती है जो जीव श्रीहरि के स्वरूप को समझते हैं वे रस्सी को गले में लपेटकर निधरक खेलते हैं और बिना जाने चाहे कितना भी महान

ऋषि, मुनि अथवा मानव है वे सब देखकर भय के मारे काँपते रहते हैं।

समता :-

जहाँ देखै तहाँ आपनौ इष्ट धर्म गुरु धाम।

कारन कारज जगत में परिपूरन रति काम॥

परिपूरण रति काम समुझि समता जिन लीनी।

निन्दा अस्तुति सुपरि विषमता बुधि तजि दीनी॥

शत्रु मित्र नहिं कोय ऊँच नहिं नीच कोइ तहँ।

सो घट भगवत रसिक श्याम श्यामा सन्तत जहँ॥

श्री भगवत रसिक जी का कथन है कि सब जगह श्री विहारीजी महाराज का ही प्रभाव छाया हुआ है सबके अन्दर में उनही का अखण्ड निवास है सब ही में वे ही समाहित हैं इसलिये सब समान है सबसों विषमता का भाव त्याग कर किसी को भी शत्रु-मित्र, ऊँच-नीच, गुणी-अवगुणी भाव से मत देखो सबसे समता का व्यवहार करते भये श्री श्यामा-

कुंजविहारी को अपने ही हृदय में अवलोकन करो। विषमता से ही भय, दुःख कष्ट आदि उत्पन्न होते हैं। श्रीहरि जब अपने हैं हम उनके हैं वे ही सबके कर्ता हैं वे ही हम सबके परम हितकारी हैं फिर भय-दुख आदि क्यों? धोबी के घर की मधूकरी ग्रहण कर, सिंह और साँप के गले में कण्ठी बाँधकर महाराज ने समता के भाव का नगाड़े की चोट उद्घोष किया है। सबके लिये मार्ग सरलता पूर्वक प्रशस्त कर दिखाया है। अपना इष्ट, धर्म, गुरु और धाम, काम-रति की तरह जगत में व्यापक हैं।

वृन्दावन का स्वरूप :-

(1)

हमारौ वृन्दावन उर और।

माया काल तहाँ नहि व्यापै जहाँ रसिक शिरमौर॥

छूट जात सत-असत बासना मन की दौरा दौर।

भगवत रसिक बतायो श्री गुरु, अमल अलौकिक ठौर॥

नागर रसिक अनन्य संग वर वृन्दावन जानि।
 गान विहारी कौ दरस बानी जमुना पानि॥
 बानी जमुना पानि पुलिन पुलिकावलि तन में।
 अनुभव नित्यविहार विहारिनि प्रगटत मन में॥
 भगवत नित्य विहार, प्रेम उमगन रस सागर।
 कुंज कुटी अभिराम भावना निरखें नागर॥

श्री भगवत दास जी ने श्री वृन्दावन के प्रगट स्वरूपों से अतिरिक्त नित्य वृन्दावन का स्वरूप स्पष्ट रूप से दर्शाया है जो रसिक अनन्यों के हृदय में ही विराजमान है वहाँ माया और काल का प्रभाव नहीं पहुँच पाता है श्यामा-कुंजविहारी नित्य निरन्तर रस विलास में छके रहत हैं जहाँ मन की चंचलता समाप्त हो जाती है सब प्रकार की वासनाओं का समापन हो जाता है यही लोक वेद से न्यारी स्वच्छ हृदय भूमि है जो निज रसिकन के हृदय में नित्य निरन्तर रूप सों सदैव विराजमान रहती है।

जो निज रसिक अनन्य जन हैं उनके अंग संग सदाँ हृदय में ही श्री वृन्दावन विद्यमान रहता है जमुना जल अर्थात् नित्यविहार रस से तरलित पदों का गायन ही श्री विहारीजी महाराज के दरसन हैं। नित्यविहार सुख से प्रिया जू का प्रफुल्लित तथा पुलकायमान होना ही पुलिन है। प्रीया जू नित्य नई प्रीति रीति सों नित्य केलि रस को सँजोये रहती है नित्य ही रंग में रंग बढ़ावत रहती है नागर रसिक अपने भाव रूपी नेत्रों से प्रेम और रस के समुद्र नित्यविहार का अवलोकन करते रहते हैं।

श्री वृन्दावन का स्वरूप अति ही सुगम और सरल दर्शा कर रसिक अनन्यों के लिये बहुत ही महान हित भरी उपलब्धि हस्तामल करा दी है।

नित्यविहार :-

नित्यविहार श्याम श्यामा को कहि प्रतच्छ दरसायो।
 रसिक अनन्य स्वाद-भेदी हित अगद राज बरसायो॥

नित्य विहार की 12 झाँकियाँ

अमल अनूप परम उज्ज्वल रस उर अन्तर सरसायो।
भगवत रसिक अनन्य आभरन नहिं नीरस परसायो॥

श्री भगवत रसिक जू ने श्री प्रीया प्रीतम के नित्य-विहार का स्वरूप बहुत ही सरलता से वर्णन कर रसिक अनन्यों का बहुत भारी उपकार किया है, बारह झाँकियों में बहुत ही सरल शब्दों में प्रत्यक्ष दर्साया है। जो रसिक अनन्य रस के स्वादी हैं उनके लिये तो मानो समस्त औषधियों के राजा अमृत रस के समान महान रस की घनघोर वृष्टि कर दीनी है। इस परम स्वच्छ, निरुपमित पवित्र उज्ज्वल रस सों हृदय को शीतल कर दिया। यह नित्यविहार रस केवल रसिक अनन्य निज जनों का ही सिंगार है शोभा है। नीरस जन इस रस का स्पर्श भी नहीं कर सकते हैं।

नित्य विहार की बारह झाँकी बहुत ही अद्भुत ढंग से अति सरल शब्दों में वर्णन की हैं जिनको पढ़कर साधक का हृदय सरस रस सों सरसित हो जाता है। श्री भगवत रसिक जी

आपकी सदाँ ही जै जै कार होती रहै। हम आपकी बलिहारी हैं। और सदैव आभारी रहेंगे।

जै जै श्री भगवत रसिक, करुणासिन्धु उदार।
अपने रसिकन कारने, बरसायो सुख सार॥
कहाँ लौ गुन बरनन करौं, हौं अति ही लाचार।
हौं तन मन गुन अरपन करौं, बन्दौं बारम्बार॥
श्री स्वामी के धर्म को, दर्सायो शिरमौर।
सब धर्मन कौ राज है, या सम और न और॥
हो कृतज्ञ करुणा करो, तुम हो अति दातार।
जमुनादास अबोध को, देहु सुखद विहार॥

श्री महाराज ने सब प्रकार से भलीभाँति निदान कर उपासना के सिद्धान्त जानबूझ समझकर दृढ़तापूर्वक हृदय में धारण कर जीवन के अन्त तक निभाया और गूढ़ से भी गूढ़ रहस्यों का मर्म समझाकर रसिक अनन्य जनों को निहाल कर दिया।

श्री भगवत रसिकदेव जू कौ परिचय

• ध्वनि - बारहमासी •

कृपा गुरु चरनन की पाऊं।

श्री भगवत रसिक अनन्य अली की शुभ गाथा गाऊं ॥

विराजै कस्बा इक छोटा।

मध्य प्रदेश जिला सागर में नाम गढा कोटा ॥

रहें तहाँ पंडित (श्री) माधवदास।

ईश्वर ही के भजन भाव में है पूरण विश्वास ॥

पुत्र जिनने दो ही पाये।

बडे रामदास हैं दूजे भगवत कहिलाये ॥

✓ सत्तरह सौ नब्बै की साल।

बैसाख शुक्ला अक्षय तीज को प्रगटे भगवत लाल ॥

खुशी अति घर में छाई है।

आनन्द में रहे फूल महा निधि सुख की आई है ॥

सराहवें पंडित जी निज भाग।

शुभ लक्षण सब लखे पुत्र में भक्ति ज्ञान बैराग ॥

सु शिक्षा घर ही में पाई।

कथा भागवत अरु गीता की गाथा समझाई ॥

पिताजी देवें नित सत्संग।

कछुक दिवस में ही भक्ति कौ चढि गयो चोखो रंग ॥

देखिकें फूलें मात अरु तात।

होनहार बिरबान लता के होत चीकने पात ॥

पिता संग कुंजन बन आये।

तहाँ ललित मोहिनीदास स्वामी जू के दरसन पाये ॥

सौंपि तिनके चरनन दीयो।

कंठी दीक्षा दई स्वामी जू कृपा पात्र कीयो ॥

नाम धरि दीयो भगवत दास।

श्री माधव दास पिताजी की अव है गई पूरण आस ॥

दास भगवत अति हरषाये ।
 जैसी मन में रही भावना तैसे गुरु पाये ॥
 चाहना बाढी है मन की ।
 गाढी रटना लगी छवी देखू वृन्दावन की ॥
 संग लै मित्र प्राण प्यारे ।
 बाईस वर्ष की उम्र भई पग वृन्दावन धारे ॥
 शीश गुरु चरणन में नायो ।
 दरशन करि महाराज के मन अति ही हरषायो ॥
 मिले श्री ललित किशोरी दास ।
 सत्संग वार्ता सुनिकें मन में बाढ्यो बहुत हुलास ॥
 देख बाबा गुरु हरषाये ।
 सुन्दर भाव देख भगवत के अति ही सुख पाये ॥
 अचक समझाये मोहिनी दास ।
 यह स्वामी जी की थाती है रखियो ढंग ते पास ॥
 खुशी भारी भगवत मन में ।
 नये नये चाव उमंग भरे घूमें वृन्दावन में ॥

छवी चुभि गई वृन्दावन की ।
 सुख उपजावन मन कूं भावन शोभा निधिवन की ॥
 करें जमुना जी में स्नान ।
 दरसन करें विहारी जी के मन में हर्ष महान ॥
 सहायक बल्लभ से पाये ।
 सन्त मिलन अरु ठाकुर दरसन जहाँ तहाँ करवाये ॥
 छटा लखि कुसुमित कुंजन की ।
 मन कूं मोहित करै निराली धुनि अलि मुंजन की ॥
 कछुक दिन वृन्दावन ठहरे ।
 गुरु शिष्य के आपस में मन मिल गये अति गहरे ॥
 सुनत हैं रोजाना सत्संग ।
 सत्संग वार्ता कौ भगवत पै चढि गयो गाढो रंग ॥
 तहाँ श्री ललित किशोरी दास ।
 बडे प्यार ते समझावें बैठारें अपने पास ॥
 दास पै ह्वैकें अतिव दयाल ।
 रहस्यमयी बातें समझाई लिखवाई केलिमाल ॥

प्रेम ते पाठ नित्त करियो ।
 श्री कुंजविहारी विहारिनि जू की छवि चित में धरियो ॥
 एक दिन बोले यों मीते ।
 भइया अब तो चलो गाँव यहाँ बहुत दिना बीते ॥
 मित्र के सुनिकें ऐसे बैन ।
 व्याकुलता छाई सब तन में भयो चित्त बेचैन ॥
 बस्यो वृन्दावन प्रानन में ।
 ताहि छोडि अनत जाइवे की खटक गई मन में ॥
 देखि हठ प्राण प्यारे की ।
 चलिवे कों मजबूर भई है दशा विचारे की ॥
 लौटि फिर कुंजन वन आये ।
 सन्त और भगतन के अब तौ ह्वै गये मन भाये ॥
 विनय करि वहाँ ही ठहराये ।
 कथा वार्ता सत्संग सुनिकें सब ही हरषाये ॥
 बन्यो तहाँ मन्दिर आलीशान ।
 उत्सव महोत्सव होय प्रेम सों रात दिवस गुनगान ॥

ज्ञान कौ सूरज उदय भयो ।
 सत्संग वार्ता सुनि सुनि कें सब मन कौ तिमिर गयो ॥
 शोर फैल्यो है चहुं ओरी ।
 सुनिके राजा हिन्दू पति भी आयो तिहि ठौरी ॥
 अर्ज राजा ने फरमाई ।
 यहीं सदाँ तुम रहौ करें हम तुम्हरी सिवकाई ॥
 बढ्यो वैभव कुंजन भारी ।
 कथा कीर्तन सत्संग सुनिकें हरषें नरनारी ॥
 सुरति वृन्दावन की आई ।
 लाखों की सम्पत्ति छोडि चलें बैराग लहर छाई ॥
 पूर्णिमा फागुन मन भाई ।
 संवत अठारह सौ तेइस में विरक्त रीति पाई ॥
 भेष लै अति ही सुख पायो ।
 भजन भाव कौ मारग श्री गुरुजी ने दरसायो ॥
 सभी जीवन सों हित करियो ।
 सब सों समता कौ भाव विषमता मन में मत धरियो ॥

विहारी सबके अन्दर हैं।
 सबही प्राणीन कौ हृदय ही मन्दिर सुन्दर हैं ॥
 लगाय कें रज सबरे तन में।
 करुआ गूदरि धारि करें विचरण वृन्दावन में ॥
 भेष कौ आवेश छायो है।
 मानो निज बैराग रूप धरि भू पर आयो है ॥
 बाबड़ी मन को भाई है।
 वहाँ करें साधना हरि सों गाढी लगन लगाई है ॥
 मधुकरी करकें उदर भरें।
 नित्य विहार सार लीला कौ चित में ध्यान धरें ॥
 विहारी बल्लभ शरण भये।
 यहाँ ही अपनौ शिष्य बनाय कें वे अपनाय लये ॥
 मोहन रसिक यहाँ आये।
 रास भावना ध्यान सीख कें अति ही हरषाये ॥
 शिष्य भयो हरी भजन बनियाँ।
 कंठी तिलक देख कें चर्चा करन लगी दुनियाँ ॥

रीति जो गुरु ने समझाई।
 बडे प्रेम सों शिरोधार्य करि सोई अपनाई ॥
 अनन्यता रीति मन भाई।
 मानि कानि देवी देवन की दीनी छिटकाई ॥
 हरी की लीला न्यारी है।
 ताही के दरम्यान पुत्र जाकौ भयो दुखारी है ॥
 भीषण ज्वर ने घेर लियो।
 सात दिवस गये बीत बूंद हू जलहू नाहि पीयो ॥
 चिन्ता सबके उर आनी।
 देवी गई है रूठ बचैगी मुश्किल जिन्दगानी ॥
 भगत जी चिन्तित अति भारी।
 धर्म संकट में फँसे बोल मारै दुनियाँ दारी ॥
 गुरु जी की आशा मन में।
 नहिं सूझै और उपाय धरी सुधि बुधि गुरु चरनन में ॥
 रसिक भगवत कें भनक परी।
 शिष्य आपने भेज बुलायो ताकों ताही घरी ॥

कृपा की नजर निहारयो है।
 चरण अंगूठा धोय नीर वाके मुख में डारयो है ॥
 अनौखी भगवत की माया।
 रोग भयो सब दूर भई है अति निर्मल काया ॥
 अचम्भो भयो बहुत भारी।
 अजब निराली गाथा सुनिकें आये नर नारी ॥
 भीर है गई बाबरी माँहे।
 दूजी गाथा और सुनो कछु यामें संशय नाँहि ॥
 निकसि कें आयो कारौ नाग।
 अति विकरालौ रूप देखिकें मच गई भागाभाग ॥
 रसिक भगवत जी वहीं बैठे।
 भयभीत भई है भीर नाग जू फन उठाय ऐंठे ॥
 छिरक कें पानी करुआ कौ।
 दूर तमोगुन कर्यो नाग विषधारी भरुआ ॥ ॐ
 नाग चरनन में आय गयो।
 शील सुभाव भयो ताही छिन अवगुन दूर भयो ॥

अतिव कृपा की नजर भई।
 दीक्षा मंत्र सुनाय गले में कंठी बाँधि दई ॥
 आज अनहोनी करि डारी।
 जै जै कार श्री भगवत की बोलें नर नारी ॥
 सुजस भगवत कौ छायो है।
 हरि कौ ऐसौ खेल भेद काहू नहिं पायो है ॥
 शिकायत गुरु के कान भरी।
 श्री भगवत रसिक माँगि पावें धोबी की मधूकरी ॥
 वैष्णव रीति भेंट दई।
 जाति बरन सब छोडि चलें मन मानी चाल नई ॥
 तिन्हें गुरुवर ने बुलवायो।
 टटिया स्थान आय शीश गुरु चरनन में नायो ॥
 गुरु जी बोले यों बानी।
 सन्तन की रुख लै चलो करो मत अपने मन मानी ॥
 रीति जो खोटी अपनाओ।
 वृन्दावन कूँ छोडि यहाँ ते कहीं चले जाओ ॥

खेल हरि अजब दिखायो है।
 वृन्दावन तजि दैवो कौ (श्री) गुरु बचन सुनायो है ॥
 अन्तिम दंडौती करि कें।
 चल दिये भगवत दास शीश गुरु की आज्ञा धरि कें ॥
 बाबरी में जो आये हैं।
 श्रीहरि की इच्छा जानि बहुत मन में हरषाये हैं ॥
 भयो सन्नाटौ श्री वन में।
 ऐसी तीखी खबरि बेगि ही फैली जन जन में ॥
 चलन की कीन्ही तैयारी।
 कछुक समय ही गयो इकट्ठी भीर भई भारी ॥
 करुआ गूदरि संग लैकें।
 चल दिये भगवत दास आपने मन में खुश ह्वैकें ॥
 आये श्री जमुना के पास।
 चतुरदास रस रंग संग में सेवक बल्लभदास ॥
 उमडि कें चली बहुत ही भीर।
 सन्त भक्त सब भये इकट्ठे जमुना जी के तीर ॥

दास भगवत बोले बानी।
 गुरु स्थान में जाओ करो तुम सेवा सुखदानी ॥
 कछुक जमुना तीरे तीरे।
 सत्संग कीर्तन करते करते चलें धीरे धीरे ॥
 मिल्यो इक जंगल बीयावान।
 तामें शेर रहै भयकारी ताकौ शोर महान ॥
 काहू कों नहिं छोडै जिन्दो।
 डर के मारे पाँव धरै ना तहाँ कोई बन्दो ॥
 बानी मोहन यों भाखी।
 खूंखार सिंह की कहानी तो मैंने हू सुनि राखी ॥
 सुनकर सबकूँ भय छायो।
 रस रंग संग में विहारी बल्लभ इक मत उपजायो ॥
 महाराज हमारी विनय चित्त लाऔ।
 या मारग कूँ छोडि दूसरौ मारग अपनाऔ ॥
 दास श्री भगवत जी बोले।
 अपने हिय के भाव सभी के आगें यों खोले ॥

सुनों तुम अजब निरालौ ढंग ।
 छोटे बड़े जीव सब ही हैं हरि के प्यारे अंग ॥
 जैसें देह हमारी है ।
 सब अंगन कौ प्रेम बन्यो आपस में भारी है ॥
 सभी मिल प्रानन कूं पोसें ।
 परस्पर दुख नहिं देय डरें नहिं काहू को कोसें ॥
 विषमता ही दुख दानी है ।
 याही के हैं वशीभूत रहै दुखी ये प्राणी है ॥
 समता मन में धरि लेवें ।
 हम सब मिलकर श्रीहरि के प्रानन कूं सुख देवें ॥
 हरि के सुख में होकर लीन ।
 नित्य निरन्तर सुख पावत हैं कोई रसिक प्रवीन ॥
 चलत हौं मैं आगे आगें ।
 तुम सब पीछें चलौ होयकें निरभय भय त्यागें ॥
 कीरतन करते चल दीये ।
 श्री विहारी जी के श्री चरणन में अटल प्रीति कीये ॥

क्रोध करि सिंह तहाँ आयो ।
 श्री भगवत जी महाराज नीर करुआ कौ छिटकायो ॥
 तमोगुन ताकौ दूर भयो ।
 पूंछ हिलातौ भयो सिंह चरनन में बैठ गयो ॥
 हाथ फिर सिर पै फेर दियो ।
 दीनी कंठी बाँधि कृपा करि अपनौ शिष्य कियो ॥
 विषमता ताकी हरि लीनी ।
 जै जै भगवत रसिक आप अनहोनी कर दीनी ॥
 सिंह कें भयो प्रेम भारी ।
 पूंछ हिलावै, चरनन चाटै, लेवै बलिहारी ॥
 सभी हैं गये हरषित भारे ।
 अजब निरालौ खेल देख सब बोलें जै कारे ॥
 फेर सब रस्ता चल दीने ।
 प्रयाग राज गये पहुंच बास जमुना तट पै कीने ॥
 बसें श्री जमुना जी के तीर ।
 सन्त और भगतन की वहाँ भी होने लागी भीर ॥

खुशी सब होवें नर नारी ।
 कथा कीर्तन सत्संग सुनिकें जावें बलिहारी ॥
 धर्म कौ झंडा फहरायो ।
 श्री स्वामी कौ वंश उजागर करिकै दिखलायो ॥
 मची जै जै कारी चहुं ओर ।
 धन्य धन्य श्री भगवत दासी कीयो धर्म कौ शोर ॥
 रीति न्यारी चलि दिखराई ।
 रसिक अनन्य भी चकित भये कछु कही नहीं जाई ॥
 बज्यो सबते न्यारो डंका ।
 सन्त महन्त गुसाई सबकी दूर करी संका ॥
 बैठ जब सत्संग में बोलें ।
 कछु नहिं करें छिपाव गूढ ते गूढ मर्म खोलें ॥
 बल्लभ दास शिष्य परबीन ।
 जो कछु सुने छन्द पंक्ति कौ ताही छिन लिख लीन ॥
 है गई इक पोथी तैयार ।
 गुरु चरनन में भेंट करी भई मन में खुशी अपार ॥

पढ़कर भगवत हरषाने ।
 वाह वाह वल्लभदास रीझिकें अति ही सन्माने ॥
 भावना मन में प्रगट भई ।
 श्री ललित मोहिनी दास गुरुजी को सो भेज दई ॥
 पढ़कर मन में मोद भयो ।
 कछु कडुवाहट लगी स्वाद सबरौ ही बिगर गयो ॥
 रची बानी अति ही प्यारी ।
 थोड़े से कडुवाहट ने बे स्वादी करि डारी ॥
 याहि मैं कैसें अपनाऊं ।
 सुबह होत ही जाऊं श्री जमुना में पधराऊं ॥
 याही चिन्ता में सोय गये ।
 स्नान करन को चल दीने होते ही भोर भये ॥
 जैसी मन में सोच लई ।
 ताही के अनुसार बाणी जमुना में बहाय दई ॥
 दूसरे दिन भी नहिं लीन्ही ।
 तीजे दिन भी येही बानी निज आँखिन चीन्ही ॥

अचम्भो देख्यो एक महान ।
 बस्ता तक भीज्यो नहिं। ताकौ यही बात परमान ॥
 फेर जमुना में बहाय दई ।
 श्री ललित मोहिनी जी ने देखी लीला अजब नई ॥
 सुने कछु शब्द मधुर सुर में ।
 साँच की आँच भरी है यामें धरि देखौ उर में ॥
 आदर करि कें अपनाओ ।
 सन्त महन्त अरु भगतन तक याको तुम पहुँचाओ ॥
 मधुर सुर सुनते चौंक पडे ।
 सबही बातें जमुना जी की सुन रहे खडे खडे ॥
 श्रद्धा हिय में उमिडाई ।
 बडे प्रेम सों लै करकें छाती सों चिपटाई ॥
 उमंग ते आय गये अस्थान ।
 भई उमंग बहुत ही मन में पढी लगाकर ध्यान ॥
 हिरदय रस सों भीज गयो ।
 रोम रोम खिल उठे तीव्र बैराग जु उदय भयो ॥

सन्त सबही बुलवाये हैं ।
 एकान्त बैठि कें भजन करेंगे बचन सुनाये हैं ॥
 सेवा सब ही तजि दीनी ।
 प्रीया लाल के महामधुर रस सों ही मति भीनी ॥
 भजन में तन मन ढारे हैं ।
 कछुक दिनन के बाद आप निज महल पधारे हैं ॥
 गादी खाली दीख परी ।
 जुरि मिलि के सन्तन ने श्री भगवत को खबरि करी ॥
 सन्त दो भेजे उनके पास ।
 वृन्दावन के सन्त देखिकें हरषे भगवत दास ॥
 प्रेम सों कीन्हो अति सन्मान ।
 सन्तन ने भी सभी बात कौ तुरत करायो ज्ञान ॥
 सन्त यों बचन सुनायो है ।
 गादी पर बैठन को सबने तुम्हें बुलायो है ॥
 रसिक भगवत बोले बानी ।
 मेरे बस की नाँय करूँ जो सेवा सुख दानी ॥

सन्त यों सुनिकें चलि दीये ।
 वृन्दावन में आय रसिक के भाव प्रगट कीये ॥
 रसिक भगवत की सुन लो बात ।
 उत्कट भयो बैराग भजन की बढी चौगुनी घात ॥
 एक दिन तन कूं छोड दियो ।
 नित्य सहचरि रूप धारि महलन कूं गमन कियो ॥
 मोहन जी मन में अकुलाये ।
 नेक शोक मत करो दास बल्लभ ने समझाये ॥
 जहाँ जाकौ खबीर परी ।
 सुनि कें ऐसी बात दौडि चल दिये तिही धरी ॥
 भीर जमुना पै जुरि आई ।
 अति आदर के सहित देह जमुना में पधराई ॥
 बोल रहे सब ही जै कारे ।
 रसिक अनन्य धर्म भानु के छिप गये उजियारे ॥
 जय जय धनि धनि भगवत दास ।
 श्री हरिदास अनन्य धर्म कौ करि दीयो अटल प्रकास ॥

रसिक वर भगवत रस की रास ।
 भगवत भगवत नाम रटे ते मिलै महल कौ बास ॥
 भेद रसिकन कौ अतिव अगाध ।
 श्री स्वामी की हेत कृपा बिन कैसें पावें साध ॥
 प्रानन प्यारे (श्री) भगवत दास ।
 जमुनादास की आस यही है दीजै केलि विलास ॥
 ॥ दोहा ॥
 जय जय श्री भगवत रसिक, महा मधुर रसखानि ।
 महा मधुर रस रीति कौ, कीन्हो अद्भुत गान ॥
 श्री स्वामी भगवत रसिक, रसिकन के निज प्रान ।
 नित्य विहार प्रेम रंग भीने, रसिक अनन्य महान ॥
 ऐसे रसिकन के सुयश, श्रवन होय कै गान ।
 श्री ललित किशोरी लाडिली, गहें सुहँसि के पानि ॥
 श्री स्वामी कृपा करी, शुभ गाथा लई लिखाय ।
 हित ही में अति हित कियो, जय जय रसिकन राय ॥

॥ चौपाई ॥

जै जै जै श्री भगवत दास ।
नित्य निकुंज महल में बास ॥
निशिदिन निरखें केलि विलास ।
हिय में और न दूजी आस ॥
समता रीति प्रीति मन भाई ।
तन मन प्रानन हिये समाई ॥
हिरदय वृन्दावन दरसायो ।
सुख समूह कौ भेद बतायो ॥
हिय में देखें केलि निरन्तर ।
पल छिन कौ हू परै न अन्तर ॥
कृपा दृष्टि वृष्टि बरसावो ।
जमुना को जमुना रस प्यावो ॥

★

श्रीभगवत रसिकदेव जी कृत बानी

★ अनन्य निश्चयात्म ग्रन्थ पूर्वाब्ध ★

॥ छप्पै ॥

(1)

सब कालन को काल लोक पालन को पालै ।
आपुन सदा स्वतंत्र नियन्ता बुद्धि बिसालै ॥
उपजावै सब बिस्व रमैं फिर ताके माहीं ।
देखत भूली करै परै भूलन में नाहीं ॥
षट् ऐस्वर्य समर्थ हरि, सो भगवत असरन सरन ।
तन मन जनकी वेदना हरहु मोद मंगल करन ॥

(2)

जहँ रस स्वादी मिलै, तहाँ सन्मान न होई ।
जहाँ होइ सन्मान तहाँ मन मिलै न कोई ॥

मन मिलाप तहँ होइ, जहा इष्टता न पाव।
जहाँ इष्टता मिलै तहाँ दारिद्र सतावै॥
जेतिक हरि के धाम तहँ काँम क्रोध क्रीडा करें।
भगवत यह कलिकाल में कहो रसिक कहँ निस्तरैं॥

॥ राग सारंग ॥

(3)

जगत में पैसनही की माँड।
पैसन बिना गुरु को चेला, खसमैं छाँडै राँड॥
जप, तप, योग, बिराग, ज्ञान की पैसन मारी गाँड।
धीरज, धर्म, बिवेक, सौचता दई पंडितन छाँड॥
सन्त, महन्त, गाम के आमिल करत प्रजा को दाँड।
भगवत रसिक संग बिन सबकी कीन्ही कलियुग भाँड॥

(4)

बेषधारी हरि के उर सालै।
लोभी, दम्भी, कपटी, नट से, सिस्नोदर को पालै॥

गुरु भये घर घर में डोलें, नाम धनी को बेचै।
परमारथ स्वपनें नहिं जानै पैसनहीं को खेंचै॥
कबहुंक वक्ता है बनि बैठै, कथा भागवत गावै।
अर्थ अनर्थ कछू नहिं भासै, पैसनहीं को धावै॥
कबहुंक हरि मन्दिर को सेवै, करै निरन्तर वासा।
भाव भक्ति को लेस न जानै, पैसन ही की आसा॥
नाचै गावै चित्र बनावै, करै काव्य चटकीली।
साँच बिना हरि हाथ न आवै, सब रहनी है ढीली॥
बिन बिबेक बैराग भक्ति बिनु, सत्य न एकौ मानौ।
भगवत बिमुख कपट चतुराई, सो पाखण्डै जानौ॥

(5)

लोभ है सर्व पाप को मूल।
जैसे फल पीछे को लागै, पहिले लागै फूल॥

अपने सुत के काज केकई, दियो राम बनबास ।
 भर्ता मर्यौ भरत दुख पायौ, सह्यौ जगत उपहास ॥
 बासुदेव तजि अर्क उपासे, सत्राजित मणि लीन्ही ।
 बंधु सहित भयो निधन आपुनौ निंदा सबही कीन्ही ॥
 भगवत रसिक संग जो चाहैं, प्रथमैं लोभै त्यागैं ।
 देह गेह सुत सम्पति दारा, तब हरि सों अनुरागैं ॥

॥ कुण्डलियां ॥

(6)

दुखिया द्विज विद्या बिना, राजा दल बिन सोय ।
 रूप बिना गणिका दुखी, जोगी जोग न होय ॥
 जोगी जोग न होय साधु हरि भजन न जानै ।
 भांड, कलावंत, भाट, सभा नट लज्जा मानै ॥
 भगवत रसिक अनन्य बिना नहिं कोऊ सुखिया ।
 असन बसन परिवार पुत्र बिन सब जग दुखिया ॥

(7)

साँचे श्रीराधारमण, झूठे सब संसार ।
 बाजीगर कौ पेखनो, मिटत न लागै बार ॥
 मिटत न लागै बार भूत की संपति जैसे ।
 मिहिरी नाती, पूत धुवाँ को धौरर तैसे ॥
 भगवत ते नर अधम लोभ बस घर घर नाँचे ।
 झूठे गढै सुनार मैन के बोलै साँचे ॥

॥ कुण्डलियां ॥

(8)

साँचे प्रिय हरि के ये प्राँनी ।
 लोभ रहित, छल रहित दयानिधि सबहीं के सुखदाँनी ॥
 निष्प्रेही गुरु भजन परायन सो सिष पार उतारै ।
 ज्यों नारद ऋषि ब्यास उबारे बूडत भव जल धारैं ॥

श्री सुकदेव भागवत गाथा परीक्षितै सुनायो ।
 सात दिवस में कलिमल खोयो हरि को बेगि मिलायौ ॥
 पूजा करि श्रुतिदेव ब्राह्मण बासुदेव बस कीने ।
 चक्षु द्वार है हृदय लै आयौ बहुरि जान नहिं दीने ॥
 नाच गाय गोपिन बस कीन्हें नागर नंदकिसोर ।
 लोक बेद कुलकानि न मानी डारी ज्यों तृण तोर ॥
 अनिरुधकुँवर कृष्ण के नाती चित्रा चित्र बनायो ।
 तादृस भई तासमय ऊषा निश्चय निजपति पायो ॥
 कविता करि जयदेव कबीस्वर कियो गीतगोविन्द ।
 ताकी साखि प्रकट सब जग, ज्यों राकापति इंद ॥
 भगवत रसिक साधु की संगति जो कदापि बनि आवै ।
 जीवन मुक्त होइ ताक्षण में फेरि न भव जल आवै ॥

इतने गुन जामें सों संत ।
 श्रीभागवत मध्य जस गावत श्रीमुख कमलकान्त ॥
 हरि को भजन साधु की सेवा सर्व भूत पर दाया ।
 हिंसा लोभ दंभ छल त्यागै बिष सम देखै माया ॥
 सहनसील आसय उदार अति धीरज सहित बिवेकी ।
 सत्य वचन सबको सुखदायक गहि अनन्य ब्रत एकी ॥
 इन्द्रीजित अभिमान न जाके करैं जगत को पावन ।
 भगवत रसिक तासु की संगति तीनहु ताप नसावन ॥

परम पावन करुवा को पानी ।
 जाके पियत हृदय में आवत मोहन राधा रानी ॥
 अनुभव प्रगट होत क्रीड़ा को मोद बिनोद कहानी ।
 भगवत रसिक निकुंज महल की टहल मिलै मनमानी ॥

॥ छप्पै ॥

(11)

तात ऋषभ सो होइ मात मंडालस मानों।
पुत्र कपिल सो मिलै मित्र प्रह्लादहि जानों॥
भ्राता बिदुर दयालु जोषिता दुपद दुलारी।
गुरु नारद सो मिलै अकिंचन पर उपकारी॥
भर्ता नृप अम्बरीष सो, राजा पृथु सो जो मिलैं।
भगवत भवनिधि उद्धरै, चिदानन्द रस में झिलैं॥

(12)

कोऊ कह अवनी बड़ी तासु दूनो समुद्र पुनि।
सो अंजुलि भर लियो ताहि सोख्यो अगस्त्य मुनि॥
नभ अगस्त्य को बास छिपै उद्योत भानु के।
भानु बेद यों कहैं चक्षु है चक्रपाणि के॥
चक्रपाणि हरि जनन के हृदय कमल कीन्हों निवास।
भगवत लघुता विष्णु लौं दीरघ हरि के दास॥

॥ दोहा ॥

(13)

व्याह कनागत, कारटौ, राजधान ग्रहदान।
भगवत जन इनको गहैं, होइ भजन की हान॥

(14)

घाट, बाट, चौपार, चुरि देवल हाट मसान।
भगवत बसि न सराय में भजन भँडाइ निदान॥

(15)

नदी किनारे गिरि सिखर बाग इकोसो देखि।
भगवत जन बिलमौ तहाँ, बाढै भजन बिसेखि॥

(16)

जीभ जुगल नामहिं जपै दृगन बिलोकै रूप।
उदर भरै अलिवृत्ति सों, छाँडि स्वान मृग धूप॥

(17)

जप तप तीरथ दान ब्रत, जोग जज्ञ आचार।
भगवत भक्ति अनन्य बिनु, जीव भ्रमत संसार॥

(18)

इष्ट धर्म मन मत मिलै, रहनी गहन स्वभाव।
भगवत ऐसे भक्त सों, मिलत बढै चित चाव॥

(19)

लात हनी भृगु हृदय में, हरि कीन्हो सन्मान।
अम्बरीष अपराध सुनि, भगवत मुँदे कान॥

(20)

बेदनि खोवै बैद सो, गुरु गोविंद मिलाप।
भूख भजै भोजन सोई, भगवत और खिलाप॥

(21)

कागा कोयल हंस बग, गुबरीला मदपान।
भगवत वरन समान दोउ क्रिया पृथक् पहिचान॥

(22)

मैं बोलै मारी गई देखो अजया आंत।
पीजन लगि लागी कुटन तब तैं बोलैं तांत॥

(23)

भगवत जन स्वाधीन नहिं पराधीन जिमि चंग।
गुन दीने आकास में गुन लीने अँग संग॥

(24)

भगवत जन चकरी कियो सुरति समाई डोर।
खेलत निसि-दिन लाडिली कबहुं न डारत तोर॥

(25)

जो कुछ करौ सो समुझि कै बिनु समझें करि नाहिं।
बिनु समझें जिन जिन करी परे अंध तम माहिं॥

(26)

ग्राम सिंह भूषो बिपिन देखि सिंह को रूप।
सुनि सुनि भूषै गलिन में सबै स्वान बेकूप॥

(27)

सुनी सुनी सब कोउ कहै देखी कहै न कोय।
देखी कह भगवत रसिक ताके पग पिय धोय॥

॥ कुंडलिया ॥

(28)

कपटी ज्ञानी कंस से बगुला कैसौ ध्यान।
वेष बनायौ पूतना जिमि असि मखमल म्यान॥
जिमि असि मखमल म्यान दसन कुंजर के ऐसे।
स्वारथ साधन और दिखावत औरहि जैसे॥
एसेनि कौ संग तजौ भक्त भगवत जिनि दपटी।
लोभी करै अनर्थ अर्थ जानैं नहिं कपटी॥

(29)

कपटी संग न कीजिये यदपि विष्णु सो होइ।
वामन है बलि को छल्यो यह जानैं सब कोई॥
यह जानैं सब कोइ बहुरि बपु धारि मोहिनी।
असुरन सुरा पिवाय सुरन दई सुधा दोहिनी॥
वृंदा धर्म घटाय मृत्यु जालंधर लपटी।
भगवत बनिता विप्र भयो परमेस्वर कपटी॥

(30)

जाकों राखै सांवरो ताहि न नाखैं कोय।
अम्बरीष प्रह्लाद ध्रुव कुंतीनन्दन जोय॥
कुंतीनन्दन जोय विभीषण गजपति ऐसे।
दुर्बासा असुरेस सुरुचि दुर्जोधन जैसे॥
दुर्जन रावण ग्राह देखि दुख लगै न ताकौ।
भगवत रसिक नरेस बाँह गहि राखै जाकौ॥

(31)

जाकौ आदर हरि करैं तासु अनादर कौन।
जासु अनादर हरि करैं ताकौ आदर कौन॥
ताकौ आदर कौन इंद्र अद्यापि जु देखौ।
गोबर्धन गिरिराज भयो सब पूज्य बिसेखो॥
भगवत रसिक अनन्य पानि गहि लीनो ताकौ।
सुरजन सब अनुकूल करै दुर्जन कह ताको॥

॥ राग काफी ॥

(32)

बलि जैहों श्री रसिकाचारज ।
नित्य बिहार उद्धार कियौ जिन मथि निज हृदय सिंधुवर बारज ॥
भ्रम तम श्रम सब हरे हमारे कर गहि सकल सँभारे कारज ।
भगवत रसिक प्रसंसित कीने स्याँमा श्याम सहायक आरज ॥

(33)

जावक जुत जुग चरन लली के ।
अद्भुत अमल अनूप दिवाकर मोहन मानस कंज कली के ॥
मंजुल मृदुल मनोहर सुख निधि सुभग सिंगार निकुंज गली के ।
सुरतरु कामधेनु चिंतामनि भगवत रसिक अनन्य अली के ॥

॥ राग गौरी ॥

(34)

नमो नमो श्रीवृंदावन चंद ।
नित्य अनंत अनादि एक रस पिय प्यारी बिहरत स्वच्छंद ॥
सत्चित आनंद रूप मय खग मृग द्रुमबेली वर वृंद ।
भगवत रसिक निरंतर सेवत मधुप भये पीवत मकरंद ॥

॥ राग ईमन ॥

(35)

जय जय रसिक रवनी रवन ।
रूप गुन लावण्य प्रभुता प्रेम पूरन भवन ॥
बिपति जन की भानिवे को तुम बिना कहु कवन ।
हरहु मन की मलिनता ब्यापै न माया पवन ॥
विषय रस इंद्री अजीरन अति करावहु बवन ।
खोलिये हिय के नयन दरसै सुखद बन अवन ॥
चतुर चिंतामनि दयानिधि दुसह दारिद दवन ।
मेटिये भगवत ब्यथा हँसि भेंटिये तजि मवन ॥

(36)

सुरतरु नागरि नेह निधान स्यामा सरन मैं तेरी ।
असरन सरन हरन भव बाधा साधा पुजवन मेरी ॥
करुणाकर करुणा करि हेरौ ढाड़ भरम की ढेरी ।
भगवत जन की जान वेदना छेदन करौ सबेरी ॥

॥ राग आसावरी ॥

(37)

जयति नव नागरी रूप गुन आगरी
 सर्व सुख सागरी कुंवरि राधा ।
 जयति हरि भामिनी स्याँम घन दामिनी
 केलि कल कामिनी छबि अगाधा ॥
 जयति मन मोहनी करौ दृग बौहनी
 दरस दै सौहनी हरौ बाधा ।
 जयति रस मूररी सुरभि सुर भूररी
 भगवत रसिक प्रान साधा ॥

(38)

मेरी महारानी श्री राधारानी ।
 जाके बल मैं सबसौं तोरी लोक बेद कुल कानी ॥
 प्राँन जीवन धन लाल बिहारी कौ वारि पियत नित पानी ।
 भगवत रसिक सहायक सब दिन सर्वोपरि सुखदानी ॥

कवित्त

॥ कवित्त ॥

(39)

मोतिन सँभारी माँग सोहत सुहाग भरी
 मोहत बिहारी मन मधुप परयो फंद ।
 दीपति उज्यारी तैसें नील एट झीनीं सारी
 मेचक कच कारी चन्द्रिका लसै अमंद ॥
 मृगमद बेदी भाल रुचि कै बनाई बाल
 कजरारे नैन ज्यों खंजन नचैं सुछंद ।
 भगवत चकोर नैन देखि देखि पावैं चैन
 प्यारी तेरो आनन सहस कला कौ चंद ॥

॥ पद ॥

(40)

लखी जिन लाल की मुसक्यान ।
 तिनहिं बिसरी वेद विधि जप जोग संजम ध्यान ॥
 नेम ब्रत आचार पूजा पाठ गीता ज्ञान ।
 रसिक भगवत दृग दर्ई असि ऐंचि कै मुख म्यान ॥

(41)

हमारौ वृंदावन उर और ।

माया काल तहाँ नहिं व्यापै जहाँ रसिक सिरमौर ॥

छूटि जात सत असत बासना मन की दौरा-दौर ।

भगवत रसिक बतायो श्रीगुरु अमल अलौकिक ठौर ॥

॥ श्रीगुरु ध्यान ॥

(42)

सुंदर रज तिलक भाल बाँकी भृकुटी बिसाल

रतनारे नैन नेह भरे दरस पाऊँ ।

बारौं छबि चंद बदन सोभा सुख सिंधु सदन

नासावर कीर कोटि काम को लजाऊँ ॥

अधर अरुन दसन पाँति कुंद कलिका बिसाँति

कमल कोस आनन दृग मधुप लै बसाऊँ ।

मधुर बचन मंद हास होत चाँदिनी प्रकास

जै जै हरिदास रसिक भगवत गुन गाऊँ ॥

(43)

कंबु कंठ मंजु दाम गौर अंग छवि सुधाम

कुंदन तैं सरस मृदुल मोहन मन भायो ।

नाल सहित कंज पान देत सदा अभय दान

तजि कै अभिमान साह अकबर सिर नायो ॥

चरन कमल कामधेनु सकल कामना सुदेन

दरसैं दृग होत चैन आपदा भगायो ।

करुवा गूदरा पास वृंदावन करैं बास

जै जै हरिदास रसिक भगवत अपनायौ ॥

(44)

कुँजबिहारी एक आस और सकल तजि दुरास

असन बसन तैं उदास बाँके ब्रत धारी ।

गान दया गुन निधान रसिक मुकट मनि

प्रधान राग भोग बखत जानि तोषत पिय प्यारी ॥

तिमिर हरन को दिनेस ताप हरन को निसेस

पाप दहन पावकेस गुरुता मुख चारी।

निधवन आसीन नित्त बर बिहार सरस बित्त

जय जय हरिदास रसिक भगवत बलिहारी ॥

॥ अष्टपदी ॥

(45)

प्रथम महातम प्रकृति ज्ञान रवि तहाँ प्रकासै।

दूजे ब्रह्म प्रकास कोटि सूरज सम भासै॥

तीजे पंकज नाभि रमा वैकुण्ठ निवासी।

चौथे दसरथ-सुवन राम गोपुर के बासी॥

पाँचे ब्रज के गोप नंद आदिक सब गोपी।

छठवें सखी समाज करैं लीला रस ओपी॥

भगवत सतयें आबरन करहिं केलि राधा रवन।

सबोपरि सर्वेस गुरु रसिकराय मंगल भवन॥

॥ अरिबल ॥

(46)

नर्क स्वर्ग अपवर्ग आस नहिं त्रास है।

जहँ राखौ तहँ रहौं मानि सुख रासि है॥

देउ दया करि दान न भूलौं केलि कौं।

भगवत बलित तमाल बिलोकौं बेलि कौं॥

(47)

सुख दुख भुगते देह नहीं कछु संक है।

निंदा अस्तुति करो राव क्या रंक है॥

परमारथ व्यवहार बनौ कै ना बनौ।

अंजन है मम नैन रसिक भगवत सनौ॥

★ श्रीनित्य विहारी जुगल ध्यान ★

(1)

निज मन में अनुभव भयौ ललिता सखी प्रसाद।

फुरी अगोचर बस्तु जग नित्य अनंत अनाद॥

(2)

जस गावत पावत नहीं आगम निगम पुरान।
आचारज दुहु दीन के कथत किताब कुरान॥

(3)

नहिं निर्गुन सर्गुन नहीं नहिं नेरे नहिं दूरि।
भगवत रसिक अनन्य की अद्भुत जीवन मूरि॥

(4)

नहीं तरे पाताल के नहीं परे गोलोक।
हृदय महा वैराट के कियो कमल में ओक॥

(5)

प्राची दक्षिन बारुनी उत्तर थाने जान।
बायव नैऋत अग्नि पुनि इनहिं आदि ईसान॥

(6)

रजधानी वृंदाविपिन बय किसोर जुगराज।
करैं सहचरी नित नए काम केलि के साज॥

(7)

गौर स्याम मंजुल मृदुल अद्भुत तन की कांति।
अधर सुधा रस बारुणी पियत लहै सुख सांति॥

(8)

तुष्टि पुष्टि तासों रहै जरा न व्यापैं रोग।
बाल अवस्था जुवा पुनि तिनको करैं न भोग॥

(9)

जन्म मरन माया नहीं जहँ निसि दिवस न होइ।
सत चित आनंद एक रस रूप अनूपम दोइ॥

(10)

निसि बास तिथि मास ऋतु जे जग के त्योहार।
ते सब देखो भाव में छोडि जगत व्योहार॥

✓ ★ श्रीनित्य वृन्दावन ध्यान ★

॥ चौपाई नागर ॥

(11)

प्रथम कुण्डलाकार सुभग श्री जमुना सोहैं।
दुहूँ कूल समतूल सुजल निरमल मन मोहै॥
फेना काई कीच जहाँ नहिं कंटक कूरा।
सर्व रसन कों स्वाद सुगंधित सुखनिधि पूरा॥
ता मधि फूले कमल कमोदनि रंग रंग के।
जलचर भाँति अनेक सनेही जुगल अंग के॥
तिनपर गुंजत मधुप मत्त मकरंद पान कर।
चक्रवाक बक हंस प्रसंसित रहित प्रेम भर॥
नाभि प्रमान गँभीर बहै अति मंजुल धारा।
डोलै कल जल जान जुगल हित बिबिध प्रकारा॥
हाटक मनि सोपान बैठिकै घाटन घाटन।
सीतल मंद सुगंध सदागत बाटन बाटन॥

तीर तीर आराम बनें विश्राम दृगन के।
सारस सुरभी मोर रंगीले झुंड मृगन के॥
सातकुंभ मय भूमि मृदुल मनि खचित बनाई।
चित्रं बिचित्र अनेक रंग अद्भुत छबि छाई॥
रतनप्रभा द्रुम बेलि कोऊ लघु दीरघ नाहीं।
साखा सबै समान परस्पर दै गलबांहीं॥
तिन पर दिव्य बिहंग बिबिध भाँतिन सों बोलैं।
ते नहिं करें पुरीष रहैं तहँ चित्त अडोलैं॥
फूले फरे सुहरे निपाते होत न कबहूँ।
भावुक रसिक अनन्य निरंतर सेवत अबहूँ॥
सुमन बाटिका बाग सरोवर उपवन सोभा।
देखैं जुगल किसोर प्रेम उपजावत गोभा॥
तिन मधि महल अनेक रंगीले भाँति भाँति के।
सुबरन सुमन जराउ कुँज कल मुकर काँति के॥

अष्ट सिद्धि नव निद्धिन के लज्जन तिन माहीं ।
 चिंतामणि सुर धेनु कलपद्रुम देखि लजाहीं ॥
 तहाँ ललित तरु मुख्य बंगला अद्भुत रुरौ ।
 दंपति मन अनुसार सर्व सुख संपति पूरौ ॥
 उज्ज्वल मंजुल मृदुल फटिक कल कुरसी सोहै ।
 अरुन हरित मनि बलित पील पाये मन मोहै ॥
 टोडा चित्र बिचित्र मनिन के किंसुक राजैं ।
 बेदूरज यक वरण सुभग तहँ छज्जे छाजैं ॥
 लघु गुमटी चहुं फेर विविध चित्राम बनायो ।
 तिन मधि गुंमट बिपुल अनूपम अति छबि छायो ॥
 पद्मराग मनि कमल तासुपर सोहत मंजुल ।
 तापर कलसा मृदुल मनोहर अद्भुत उज्ज्वल ॥
 महिराबै कमनीय कमाने कहत न आवैं ।
 तिन मधि बूटा बेलि हरत मन मोद बढावैं ॥

ताके दस दुइ द्वार कँगूरा कोरन कोरन ।
 मुक्ता बंदन माल झूमका छोरन छोरन ॥
 चौखट चार किवार कटीले मंजु मनोहर ।
 घुल्ला बिद्रुम ताख जथा बिधि रहे प्रेम भर ॥
 परदा चित्र बिचित्र सरस सौरभ सों बोरी ।
 चितवत चित बित लेहिं चाँदनी झालर डोरी ॥
 बैदूरज मणि तख्त लगे बिद्रुम के पाये ।
 मखतूली मखमली बिछौना बिमल बिछाये ॥
 तापर तकिया गिलम तासु पर मसनद अद्भुत ।
 तापर भगवत रसिक सखी बपु दंपति संजुत ॥

॥ सखी ध्यान ॥

(12)

पट भूषण अनुराग सहज सिंगार जगल उर ।
 रसनिधि रूप अनूप वैस ऐश्वर्य गुननि गुर ॥

लीला षट ऋतु दान मान मंजुल मन मोदी।
 भोजन सैन बिहार करें ललिता की गोदी॥
 एक प्राँन मन एक देह द्वै प्रीतम प्यारी।
 तिनकौ नख सिख ध्यान कहौ छबि न्यारी न्यारी॥

✓ ॥ श्री लडैती जू को ध्यान ॥

(13)

प्यारी सिरसीमंत सुभग सेंदुर गुरु मोती।
 सीस फूल चंद्रिका उदित दुति अद्भुत जोती॥
 चिकुर सचिक्कन चारु स्याँम आडंबर भारी।
 पटियन मिडियन बीच चुटीला अति छबि कारी॥
 फूलन गूँथि सिंगार कियो सखियन तिन माहीं।
 पीछै बैनी फूल कछू उपमा कौ नाहीं॥

कबरी कुसुमन कलित नितंबन ऊपर लटकै।
 फूलन झब्बा अंत तहाँ ते मन नहिं भटकै॥
 तनसुख सारी स्याँम कसीदा सुबरन सूतन।
 कोर किनारी किरन छबीली सीपी पूतन॥
 उदित ललित लिलाट खौर सोहै चंदन की।
 मृगमद बेंदी अर्द्धचंद सुरकी बंदन की॥
 तापर बैना विसद जगमगें जोति बिसाला।
 फेंटनि मुक्तन लरैं पनरियनि मणि छबि जाला॥
 भृकुटी बिकट विसाल लाल के मन को करषैं।
 तापर पतरी अलक झलक अद्भुत रस बरषैं॥
 दीरघ नैन रसाल कनपटिन परसत कोये।
 कज्जल मंजुल चपल अनेरे मदन बिगोये॥
 नासा बेसरि सुभग निकट सोहै उर मौली।
 बोलन डोलन माहिं तासु छबि परत न तौली॥

करनफूल तरकान उपरकन सोहै तन्ना ।
 मध्य झलरिहा पान जराऊ मानिक पन्ना ॥
 तिनसों मिलिकै चली बंदनी परसत माँगें ।
 चित्रित सुरंग कपोलन पर अलकावलि हाँगें ॥
 अधर दसन अति अरुण बदन बीरन की पावन ।
 मंद मधुर मुसिकान कहत कछु रस उपजावन ॥
 जुग कपोल तिल गाड चिबुक मसि बिंदु बिराजै ।
 कंठपोति अति जोति मुक्त दुलरी छबि छाजै ॥
 चौकी ऊरवर रुचिर तासु पर नाम बिहारी ।
 उन्नत उरज समान पीन पिय रहत निहारी ॥
 अतलस अँगिया ललित लाल सौरभ रस भीनी ।
 गुल गो स्याँमल रंग तासु की माँडनि दीनी ॥
 मुहरन मुक्तन कोर किनारिन अति छबि छाई ।
 पन्ना मानिक परभ तिलक सोभा सुभ पाई ॥

मीनाकारी बेलि नकस बूटा छबि जाला ।
 तापर चंदाहार विराजत मोहनमाला ॥
 अंचल चंचल छोर किनारी मुक्तन कोरें ।
 उदर उरोजन छंदि गयो बाई भुज ओरें ॥
 बनी तनी छबि सनी चारहू छोरन फँदना ।
 जथाजोग सब अंग रँगीले राजत गुँदना ॥
 मलयज मृगज मिलाय गौर तनु लेपन कीनों ।
 तापर अतर गुलाब बसन भूषन पुट दीनों ॥
 बाहर बाजूबंद जराऊ जुगल नवैया ।
 खग्गा मीनाकार बने अद्भुत छबि छँया ॥
 पहुचिन पहुंची बनी पुही मखतूल पछिलिया ।
 रंगबिरंगी बलय दुहू कर ललित पटिलिया ॥
 कर पृष्ठन करफूल हरित मणि अद्भुत सोभा ।
 करतल महँदी सुरंग रँगीली लखि चित चोभा ॥

दस अँगुरिन बर मुँदरिन की छबि कहत न आवै ।
 पोरन पोरा जोर नखन दुति अति मन भावै ॥
 दुहुँ कर बीना लिये मृदुल अद्भुत अति रुरौ ।
 मीना नकस जराउ गान विद्या रस पूरौ ॥
 त्रिवली उदर रसाल निकट तहँ नाभि गँभीरा ।
 कटि प्रदेस कृसि देखि लाल मन होत अधीरा ॥
 ता मधि किंकिनि जाल जगमगें उद्दिदत सोई ।
 बिपुल नितंबन लसै सरस लहँगा की तोई ॥
 तापर झालर झलमलात पचरँग भराव की ।
 कोर किनारिन करी चित्र रचना जराव की ॥
 नीवी ललित सुचारु नाभि के नीचे सोहै ।
 बाँधीबर मखतूल उभै फुँदना मन मोहै ॥
 ता तरि जटित जराव झूमकन अद्भुत नारौ ।
 देखत बनत न कहत अमित अतुलित छबि भारौ ॥

अतरोटा रँग स्याँम सचिक्कन सुलफ सुहायो ।
 जरतारी बर बेलि बुटी अतिसय छबि छायो ॥
 आडंबर बर घेर घूम ताकी अति भारी ।
 सबज रंग संजाप कनी कसुमी छबि कारी ॥
 तापर कीनी कलित किनारी मुक्तन जारी ।
 तापर सोहत अग्रभाग कुच पावन सारी ॥
 गोरी गुल्फन तरें बाजनी घूँघर पायल ।
 दिव्य जराऊ मृदुल लाल मन करती घायल ॥
 अनवट बिछिया बाँक छिंगुरियन लगी लुनाई ।
 थकित होत मन नैन बिलोकत अति निपुनाई ॥
 जावक चित्र बिचित्र साँथिये पाद पीठपर ।
 सहज सुभायक बसी अरुणता अद्भुत पगतर ॥
 भूषन बसन सिंगार देखि छबि कहैं बाल के ।
 मन कीनौ उत्साह कछू अब कहन लाल के ॥

✓
॥ श्री लालजी को ध्यान ॥

(14)

स्याँम चरण तर बसी अरुणता सहज सुभायक ।
एडिन जावक चित्र रँगे नख अति सुखदायक ॥
छला किटिकिरेदार चरण अँगुरिन दस सोहै ।
जंबू-नद नग जडे मृदुल उपमा को कोहै ॥
पाद पीठ दुहुं फूल मध्य नायक तहँ हीरा ।
जगमग जोति विसाल हरै नैनन की पीरा ॥
पायजेब दुहुं पाँड़ नूपुरन मनि गन जाला ।
मुक्तन लारे लगे मंजु मृदु सब्द रसाला ॥
जघन जानु ते उतर पायजामा तहँ आयो ।
मोहरन मुक्ता मंजु जँजीरन अति छवि छायो ॥
तापर बूटा बेलि कसीदा रस उमंग कौ ।
नेफा नारौ ललित फुंदना पीत रंग कौ ॥

दामन घेर घुमंड अपूरब ताकी लावनि ।
अद्भुत अमल अनूप श्रीसंकर मन भावनि ॥
कसुमी रँग संजाफ किनारी मुक्तन भारी ।
ता पर बूटा बेलि स्वर्ण सूतन की जारी ॥
मनिगन चित्र बिचित्र तासु छबि सोहत चीना ।
रंग बिरंगी तनी बनी बर ग्रंथि नवीना ॥
तापर चोली चारु किवारी बँद फुँद गुटिया ।
पिछवाई गिरवान बसंती रँग छबि मुटिया ॥
तापर चित्र बिचित्र कसीदा जरतारी को ।
सियने रत्न जराब जहाँ तहँ बरतारी को ॥
बाहें चूरीदार साँकरी कर कुचिआई ।
मुहरन मुक्ता लगे जँजीरन अति छबि छाई ॥
कास्मीर श्रीखंड स्याँम अँग लेपन कीन्हों ।
अंबर अतर लगाय गुलाबी को पुट दीन्हों ॥

पृथु नितंब कटि छीन फटकि मनि किंकिनि जाला ।
 तामधि लारे लाल बाजने सब्द रसाला ॥
 तापर नाभि गँभीर तासु पर त्रिबली नीकी ।
 तहँ कछु तोंद दिखाय विहारिनि जीवनि जीकी ॥
 तापर उन्नत उर रसाल आयत उर राजै ।
 तापर चौकी चारु विहारिनि नाम बिराजै ॥
 पुष्परज मनि कंठ लसै वर मुक्तन सेली ।
 सब्य असव्य रसाल चंद्रमाला अलबेली ॥
 पीन अंस भुजदंड जानु लौं जात विसाला ।
 तिन पर बाजू बँधे जराऊ जुग छबि जाला ॥
 पहुंचन पहुंची पीत मनिन जुत टोडर गजरा ।
 जगमग जगमग होत चुभ्यो चित टरत न नजरा ॥
 कर पृष्टन करफूल जराऊ जगमगाति अति ।
 देखत बनें न कहत बावरी होत सबै मति ॥

दस अँगुरिन वर मुँदरी भाँतिन भाँति बिराजै ।
 पोरन छला रसाल दिपति नख सहित समाजै ॥
 करतल मेहँदी अरुण रँग चित्राम बनायो ।
 बूटा बेलि संहारि साथियन चित्त चुरायो ॥
 तिन मधि मुरली बसै जटित मनि परम रसाला ।
 सप्त स्वरन सों भरी राग रागिनि छबि जाला ॥
 कटि प्रदेश पट बँध्यो स्वर्ण सूतन सों भरियाँ ।
 कोर किनारी किरन ललित पल्ले मन हरियाँ ॥
 चिबुक चखौडा चारु चुभो चामीकर बुंदा ।
 तापर दीनी ओप झलमले जोति अमंदा ॥
 अधर दसन अति अरुन दीप्त मुख पान खान की ।
 मंद मधुर मुसक्यान हरन मन प्रिया मान की ॥
 नासा बेसर वर बुलाक मंजुल रस बरषत ।
 थिरकन फरकन पुटन देखि मन नैनन करषत ॥

चंचल नैन विसाल अरुन अंजन जुत फूले।
 अनियारे अनुकूल देखि प्यारी दृग भूले॥
 भृकुटी विकट बिसाल आड तामधि रोरी की।
 तापर बेंदी दड़ प्रसादी तनु गोरी की॥
 जापर वृक्ष विलोक जराऊ पचरंग भरियाँ।
 चंदन खौर ललाट करी बर चित्र लहरियाँ॥
 कलित कपोलन करी चित्र रचना बिचित्र वर।
 अलकावलि रहि झूमि सरस सौरभ भीजी भर॥
 बडे बडे मोती लसै कान कुंडल फंद्वारे।
 तापर मोराकृत जराब छबि सों मतवारे॥
 सीस सचिक्कन केस मंजु बाँध्यो कसि जूरा।
 तापर गोल अमोल लसै मनि अद्भुत चूरा॥
 तापर बाँधी पाग जरकसी छबि मरोर की।
 बाँकी खिरकिनदार पीत रस रंग जोर की॥

अग्र भाग सिरपेंच जराऊ तापर कलगी।
 तुरा पच्छिम भाग सर्व उपमा ते अलगी॥
 दे गलबाँही रहे परस्पर चिबुक टटोहैं।
 फूलन की बनमाल एक पहिरे जन दोहैं॥
 जहाँ जो झाँकी लेय तहाँ है दीखै संमुख।
 नागर परम बिचित्र देत सखियन सर्वस सुख॥
 रीझि बलैया लेहिं दुहूँ कर अँगुरी फोरें।
 राई नोन उतारि रसिक भगवत् तृण तोरें॥
 दंपति बदन बिलोकि बारि तापर जल पीबै।
 प्राण निछावरि करें कहैं जोरी चिरजीवै॥
 आस पास सहचरी सुघर रंग भीनी सोरा।
 गौर स्याँम अभिराम रूप गुन बैस किसोरा॥
 बसु गौरी वसु स्याँम ततसुखी है दुहुं ओरें।
 गोरी सेवै स्याँम स्याँम गोरी चित चोरें॥

छत्र चंवर बिजनादि बसन भूषन सिंगार सबि ।
 भोजन पानी पान आरसी मुख देखन छबि ॥
 बीना वैनु रवाब पीकदानी सुख सज्जा ।
 सतरंज चौपर खेल खिलावै बिगलित लज्जा ॥
 अपनी अपनी टहल करैं सब न्यारी न्यारी ।
 इह बिधि आठौ जाम लडावैं प्रीतम प्यारी ॥

★ सोरह सखियन के नाम ★

॥ दोहा ॥

(15)

गजगामिनि दुति दामिनी पृथुनितंबिनी बाल ।
 कटिकेहरी कृसोदरी पीनस्तनी रसाल ॥

(16)

दरकंठी बिंबाधरी दाडिम दसनी बीर ।
 पिकबैनी मृगलोचनी ससि-बदनी रस शीर ॥

(17)

भुज मृनाल भृकुटी धनुष कदली जघन सुबाम ।
 नख तारागन सहचरी के सुभ सोरह नाम ॥

॥ सखी नैन दथा ॥

(18)

छके जुगल छबि बारुनी डसे प्रेम बर ब्याल ।
 नैनन परसैं गारुडू देख दुहुन को ख्याल ॥

(19)

आरोहन अवरोहनी करत रहैं दिन रैन ।
 भगवत रसिक अनन्य के धनि धनि दोऊ नैन ॥

(20)

जुगल ध्यान रसरीति को रूपक कियो बखान ।
 भगवत रसिक अनन्य तुम लीजो रस मय जान ॥

॥ दुराराध्य ॥

(21)

नित्य बिहारी जुगल को ध्यान अमल अनुछिष्ट ।
तापे उपमन परहरौ जानौ जगत उछिष्ट ॥

(22)

जोगी ज्ञानी कर्मठी तपसिन ते अति दूर ।
नागर रसिक अनन्य नित रहत नैन भरपूर ॥

(23)

नवधा भक्ति निमित्त लै जे सेवत अवतार ।
चाह मुक्ति वैकुण्ठ की तिन को नहिं अधिकार ॥

(24)

रूप भोग दीन्हो दृगन ललिता गोद निहार ।
मन अनन्य रसिकाभरण झाँकी झाँक बिहार ॥

॥ फल स्तुति ॥

(25)

जुगल ध्यान सीखे सुने समुझे जो चित लाय ।
ताहि रीझि भगवत रसिक लेत आप उर लाय ॥

★ श्री अनन्य रसिकाभरण ग्रंथ ★

रस सिंगार केलिसागर

प्रथम झाँकी

॥ कुंडलियाँ ॥

(1)

नित्य बिहारी की कला प्रथम पुरुष अवतार ।
तासु अंस माया भई जाको सकल पसार ॥
जाको सकल पसार महातत्व उपज्यो जाते ।
अहंकार उत्पत्ति भई श्रुति कहै जु ताते ॥
अहंकार त्रैरूप भयो सिव-विधि असुरारी ।
भगवत सबको तत्व बीज श्रीनित्य बिहारी ॥

(2) देखै जीव जहाज चढि दूरबीन धरि नैन।
 ऐसेहि बस्तु बिचार बर लखैं आप उर ऐन॥
 लखै आप उर ऐन उपासक तौन कहावै।
 रहै गुनन के बीच गुन आसक्त न आवै॥
 भगवत रसिक अनन्य सभा ते आवैं लेखें।
 प्रकृति पुरुष ते परे परम उज्ज्वल रस देखें॥

(3) मंगल मूरति लाडिली मंगल मूरति लाल।
 मंगल मूरति सहचरी मंगल मय सब काल॥
 मंगल मय सब काल अमंगल मूल नसावन।
 मंगल मोद बिनोद महल मंगल मन भावन॥
 मंगल भगवत रसिक सुजस सर्वोपरि मंगल।
 कहें सुनें अनुमोद करें गवें बर मंगल॥

(4) बर अनन्य रसिकाभरन रसिकन को अवतंस।
 विषय वारि निरवारि पय प्रगट कियो हित हंस॥
 प्रगट कियो हित हंस उपासक सुनि सुख पावैं।
 नागर रसिक अनन्य स्वाद भेदी मिलि गावैं॥
 भगवत यह रस रीति भावना करें निरंतर।
 नीरस नरन विहाय अबुध मत्सरी बिदुषवर॥

★ श्री रसिक स्वरूप ★

॥ सौरठा ॥

(5) जीव ईस मिलि दोय नाम रूप गुन परिहरैं।
 रसिक कहावैं सोय ज्यों जल घोरैं सर्करा॥

(6) दिया कहै सब कोय तेल तूल पावक मिलै।
 तमहि नसावै सोय बस्तु मिलें भगवत रसिक॥

॥ नवरस-दोहा ॥

(7)

नवरस नित्य बिहार में नागर जानत नित्त।
भगवत रसिक अनन्य बर सेवत मन बुधि चित्त॥

(8)

पाँयन परि बिनती करें सो रस मुख्य सिंगार।
मान छोडि मृदु बचन कहि करुना रस निरधार॥

(9)

सेना बेनी हास रस हत्था बाही बीर।
कम्प भयानक जानिये रौद्र छुडावै धीर॥

(10)

रद छद में बीभत्स रस अद्भुत भ्रम को देत।
बूडि रहे सुख सिंधु में परम सांति रस हेत॥

(11)

काया कुंज निकुंज मन नैन द्वार अभिराँम।
भगवत हृदय सरोज सुख बिलसत स्याँमा स्याँम॥

(12)

रूप सरोवर लाडिली फूले सहज सरोज।
पानि पाद नाभी नयन आनन उदित उरोज॥

(13)

दुःख दिखावत लाडिली कर मूँदत निज गात।
अति अधीर हा हा करें लाल खिलौना हात॥

(14)

नीबी बंधन कंचुकी कसन काछनी छोर।
बिलसत मोहन मधुपलों नागर रसिक किसोर॥

(15)

सुरति सरोवर समर जल उठत कटाक्ष तरंग।
फूले अष्टादस कमल अद्भुत अद्भुत रंग॥

(16)

दोऊ कानन लगि कहैं चुंबन देहिं अकोर।
अब के मोहिं जिताब सखि लेहुँ बलैयाँ तोर॥

(17)

सुमन सेज पौढें दोऊ परिरंभन सुख लेत।
हँसि हँसि भगवत रसिक को फिरि फिरि चुंबन देत॥

(18)

कुंज बिहारिनि लाडिली कुंजबिहारी लाल।
भगवत रसिक हृदय बसत गौर स्वाँम की माल॥

॥ राग ललित ॥

(19)

तीरथ राज निधिवन जान।
सलिल सुद्ध स्वरूप दंपति नहिंन उपमा आन॥
गौर स्याँम सरीर गंगा जमुना जलचर नैन।
नाभि ललना लाल की परसत अखँबट ऐन॥

करज कुसुमनि पूजि पिय माधो पयोधर पीन।
मकर मकरध्वज मनोरथ सफल सब विधकीन॥
दान दै दसनावली द्विज जानि सुरभि कपोल।
मेखला मंजीर मुनि जय धुनि जघन गति लोल॥
रसिक भगवत सरस्वती सेवत सहित अनुराग।
मुक्त कबरी कंचुकी नीबी नितंब सुझाग॥
भँवर भूलनि में तरैं बूडे बदन अंभोज।
कूल भुज अनुकूल बलय तरंग संगम ओज॥
न्हाय सुकर बनाय सुचि सिंगार भूषन चीर।
मोद मंगल नित नये सरसत न परसत पीर॥
ब्योम भूमि पताल में नहिं रमापति की ठौर।
बर विहारिनि कृपा उर पैये न साधन और॥

★ श्री इष्ट ध्यान ★

॥ राग भैरवी ॥

(20)

अद्भुत रसकी खानि सदा सुखदानि विहारिनि रानी ।
जीवन मूरि बिहारी को धन वृंदावन रजधानी ॥
आदि न अंत सनातन अबिचल सहज सुभाव सुमानी ।
नागर अति सुकुमार नवल नित रसिक सिरोमनि जानी ॥
कोक कला संगीत लाल को सिखवति गति रस सानी ।
रूप बयस गुन की मरजादा पटतर को नहिं आनी ॥
सेष गिरीस मेरु मंदर हिम कंदर में तप ठानी ।
ग्रीवा सींव सकल सोभा की गोत कपोत उडानी ॥
मेचक चिकुर सुचारु नील मनि नीरद छबि न तुलानी ।
बेनी बनक बिसाल ब्याल अलकावलि अलि अलगानी ॥
भृकुटी कुटिल बिलोकि काम को दंड खंड भयो मानी ।
श्रवन श्रवन सुनि गमन गगन में मगन भई ससि रानी ॥

बदन चंद्र को देखि सुधाकर घटत बढत भय मानी ।
खंजन कंज मीन मृग नैननि सकुचि दुरे बन पानी ॥
नासा निरखि सुमन तिल सूखौ कीर पीर उर आनी ।
ललित कपोल गोल दरपन मन भये मधूक मलानी ॥
अधर बिंब दाडिम दसनन दुति कुंदकली कुम्हिलानी ।
बचन रचन मुसक्यान कोकिला दामिनी धन लपटानी ॥
चिबुक चखोंडा चारु बिराजत गुदना गंड गुमानी ।
रस सिंगार रह्यो रजनी में मानस मदन महानी ॥
कंबुकंठ की रेख देखि त्रैकरत समुद तनु हानी ।
चक्रबाक श्रीफल उरोज तरु सर सेवत बिलखानी ॥
बाहु मृनाल भोग भोगी के अँगुल मूँग मुरझानी ।
अतिसय भीति अभीत न अबलौं बिबरन पंक परानी ॥
चल दल उदर त्रिबेनी त्रिबली तलफत समुद समानी ।
नाभि गँभीर सभीर सुधारस कियो पताल पयानी ॥

बिपुल नितंब चक्र रति रथ के पृष्ठ पट्टिका भानी ।
 चाल मराल द्विरद केहरि कटि अटबी अटत अमानी ॥
 जंघा कदलि देखि कपै अति गुल्फ गुलाब गलानी ।
 चरन अरुन तल ललित दिवाकर भ्रमत श्रमित हत मानी ॥
 कंचन तनु लज परत अग्नि में नख नछत्र नभ थानी ।
 उमा रमा रति सचि सरस्वती सहित सुहाग बिकानी ॥
 सुर-तरु कामधेनु चिंतामनि वारि दिये देव दानी ।
 अष्ट सिद्धि नवनिद्धि बापु री कौन करें सनमानी ॥
 षट् ऋतु बारह मास रैन दिन रहत एक रस सानी ।
 सेवत स्याँम सकाम स्वामिनी स्याँमा नेह निधानी ॥
 सब ऐस्वर्य छिपाइ पाँइ परि दीन भयो अभिमानी ।
 प्रगट कियो माधुर्य मधुर रस रसिक नरेस निसानी ॥
 नेति नेति निगमागम गावत पावत नहिं बुद्धि बानी ।
 भगवतरसिकरसिकसखियनसँग अँखियाँनिरखि सिरानी ॥

॥ कुंडलियाँ ॥

(21)

सुचिता शील सनेह गति चितवन हास बिलास ।
 कच गूथनि सीमंत सुभ भाल तिलक सुख रास ॥
 भाल तिलक सुख रास दृगन अंजन अति सोहै ।
 बीरी बदन सुदेस चिबुक मसि कनि मन मोहै ॥
 जावक महँदी अंगराग भगवत नित रुचिता ।
 ये सोलह सिंगार मुख्य तामें बर सुचिता ॥

(22)

नूपुर बिछिया किंकिनी नीबी बंधन सोय ।
 कर मुँदरी कंकन बलय बाजूबंद भुज दोय ॥
 बाजूबंद भुज दोय कंठ श्री दुलरी राजै ।
 नासा बेसरि सुभग श्रवन ताटंक बिराजै ॥
 भगवत बैना भाल माग मोती गो ऊपर ।
 द्वादश भूषन अंग नित्य प्यारी पग नूपुर ॥

(23)

अतरौटा अतलस लसै लाही अँगिया अंग।
तनु सुखसारी सोहनी ललित लाल के रंग॥
ललित लाल के रंग लाडिली बसन बिहारी।
पगिया पटुका झँगा पायजामा छबि भारी॥
भगवत रसिक अनन्य लखें भावुक रस मोटा।
कसन बसन अभिराम स्याम स्यामा अतरौटा॥

(24)

बाजे बजत बिहार में सहज सुहाये अंग।
बीना बेनु मृदंग डफ झाँझ रवाब उपंग॥
झाँझ रवाब उपंग सरस सुरमंडल देखौ।
सारंगी सुखरासि मँजीरा मृदुल बिसेखौ॥
राग रागिनी उपज सप्त सुर सहित समाजै।
भगवत रसिक अनन्य भेद जानत कोउ बाजै॥

द्वितीय श्रुती

द्वितीय झांकी
॥ राग विभास ॥

(1)

नित मेरो लालन नित ही लली।
नित्य बिहार नित्य वृंदावन नित नये कौतुक करहिं अली॥
नित नयो नेह नित नयौ जोबन नित नयौ तौल नवल नवली।
नित नये स्याम होत हैं स्यामा नित नई स्यामा स्याम छली॥
नित नये बसन नित्य आभूषन नित नये केसन कुसम कली।
नित नये अंगराग आलिंगन नित नये भोजन भाँति भली॥
नित नये बनाबनी बने दोउ नित नई भावे पुलिनथली।
नित नई सेज बनावत भगवत केलि बिलोकत चित न चली॥

(2)

स्यामा-स्याम संग जागें समर सैन दलकें।
बर बिनोद मोद रंग उमँगि उमँगि छलकें॥
कजरारे नैन अरुन सिथिल भई पलकें।
कल कपोल दसन छाप बिथुरी बर अलकें॥

सुरत श्रमित अंग अंग श्रमकन मुख झलकें।
देखि देखि दुहुं ओर बाढी मदन ललकें॥
भगवत कर अंचल सों पोछत हैं हलकें।
चपल नैन खंजन से मिले चारु चलकें॥

॥ मांडा ॥

(3)

उन्मीलित लोचन जम्हाँति लालन प्यारी गलबाँहीं।
छूटी अलक स्वेद-कन मुखपर लसत कपोलनि छाँही॥
अलट पलट गये बसन अंग सब नख छद उरजन माहीं।
भगवत समर समर में भट दोड लरत मुँ मुख नाहीं॥

(4)

डगमगात पग धरत धरनि पर बोल अटपटे बोलैं।
प्यारी ओढि पीत पट लीन्हों लालन नील निचोलैं॥
नीबी बंधन करत लाडिली लाल लंक गति लोलैं।
भगवत हँसत देत मुख अंचल नैन न चैनन डोलैं॥

(5)

झूमत झुकि अँगरात लाल प्यारी अंसन भुज लावैं।
ललिता बसन सम्हारि सम्हारत दसा देखि सचुपावैं॥
नख छद अंगन अंग बिराजत लै आरसी बतावैं।
सकुचत हँसत रसिक भगवत के इहि बिधि नैन सिरावैं॥

॥ राग रामकली ॥

(6)

मंगल आरति मंगल मूल, सकल अमंगल भये निर्मूल॥
मंगल सुरति सेज सुख सूचत मंगल भूषन पलट दुकूल।
मंगल गौर स्याम मुख पंकज मंगल अलकावलि अलि झूल॥
मंगल ललितादिक सखि गावैं मंगल करि बरषावैं फूल।
मंगल दृग दीपावलि साजैं मंगल मन बाती मखतूल॥
मंगल लेत बलैया भगवत मंगल देह दसा गई भूल।
मंगल नित्य बिहार करैं मिलि मंगल कालिंदी के कूल॥
मंगल महल सदा वृंदावन मंगल पिय प्यारी अनुकूल।
मंगल जमुना-पुलिन बिराजत मंगल कमलादिक रहै फूल॥

(7)

मेरे प्राण धन स्वामिनि स्याम राधे ।
एक रस रूप सम वैस बारिज बदन छके रहें प्रेम यह नेम साधे ॥
करत केलि बिपरीत परस्पर विछुर नहिं जात कहुं पलक आधे ।
नैन की सैन बरबैन भगवत रसिक देत सुख लेत सहचरि अगाधे ॥

॥ कुंडलियाँ ॥

(8)

परदा फारे कपट के झपटि लाडिली लाल ।
प्रगट भये मम मानसर स्यामल गौर मराल ॥
स्यामल गौर मराल इंद्रजाली नट जैसे ।
दृष्टि बंध करि दुरैं सिद्ध लोकांजन तैसे ॥
भगवत रसिक अनन्य हरे तनु मन के दरदा ।
ढरे निरंतर आइ स्याम स्यामा तजि परदा ॥

स्यामा स्याम रसायनी मिलें अनन्य उदार ।
निज रस रीति दृगन दर्ई भई मयूर मुदार ॥
भई मयूर मुदार कनक तनु मरकत मनि लौं ।
अँग अँग जरयो जराव आभरन दामिनि घन लौं ॥
मन मखतूल पुहाय परम उज्ज्वल अभिरामा ।
पहिरें भगवत रसिक सहचरी संतत स्यामा ॥

तृतीय झांकी

॥ राग विलावल ॥

(1)

नव ग्रह नागर अंग में नवरंग रंगीले ।
अति अनुकूल सदा रहें रस रासि छबीले ॥
राहु कनक मय देखिये कुज माँग सिंदूरो ।
बैना भाल सुहावनो सूरज सुख पूरो ॥
भृकुटिन केत महाबली नैननि सनि अंजन ।
नासा बेसर सुक्र की सोभा मन रंजन ॥

दसनावलि दुति चंद्रमा सुर गुरु तनु नीको।
 गुदना हरित कपोलन पै बुध जीवन जीको॥
 जापक स्याम गुरौरिया जाचत रति दानै।
 हँसि भगवत की स्वामिनी बहु बिधि सनमानै॥
 आसिष दै दुलरावहीं द्विजराज बिहारी।
 चिरंजीव कुच मंडली जजमान तिहारी॥

(2)

द्वै दामिनि के बीच में घन एक बिराजै।
 रूप अनूपम माधुरी अद्भुत छबि छाजै॥
 इंद्र धनुष नहिं देखिये बगपांति न भ्राजै।
 मंद मंद मृदु घोर सों सुर सब्दन गाजै॥
 उमडि घुमडि बरणा करै मिलि स्वाति समाजै।
 भगवत प्राँन पपीहरा पोषत साजै॥

॥ राग देवगधार ॥

(3)

सखी यह सुनौ अलौकिक बात।
 स्याँम तमाल असकंधन फूले बिबि जलजात॥
 तिनके दलन अग्र उड्डपति तिनहिं लजात।
 तिन पर ब्याल सुवन बरहीसुत खेलत हिलि मिलि गात॥
 तिन के कोस अरुनता अविचल वारौ अरुन प्रभात।
 तिनके मूल मराल मंडली उछरि उछरि किलकात॥
 तिनके निकट निवास श्रुतिन को कलरव सुनत सिहात।
 भगवत रसिक कहत नहिं आवै निरखत नैन सिरात॥

॥ राग हव्हेया ॥

(4)

जमुन जल विमलत जुगल किसोर। *same tune as* HC 21, 22
 उबटि न्हाइ पहिरि पट भूषन सजि सिंगार दुहुं ओर॥
 रस भोगी रस भोगत रुचि सों हिल मिल हियो हिलोर।
 भगवत अधर पान अचवन लै बीरी देत मुख जोर॥

(5)

आरति आनि सहचरिन साजी।

मनिमय थार प्रेम की बाती घृत कपूर रुचि राजी ॥

जोति जगाय नेह चितवनि मुसक्यानि लाज लजि भाजी।

भगवत रसिक बारि तून तोरत झाँझ झालरी बाजी ॥

(6)

सखी यह कौतुक देखौ आय।

स्याँम तमाल कनक की बेली रही मनो लपटाय ॥

साखा भुज सोहई हों कोटर श्रवन सुहाय।

किसलय दल अँगुरी बनी याके फूल दसन मुसिक्याय ॥

मंद हास मधु बरषहीं हो अंग राग महकाय।

फल उरोज रस सों भरे पिय परसत पानि सिहाय ॥

सुक पिक केकी बोलहीं हो गुंज मधुप मडराय।

भगवत रसिक हृदय अवनी पर बिलसत सहज सुभाय ॥

प्रेम सलिल सखि सीचहीं हो कोक कला गुनगाय।

बीज बिचित्र बिहारी बिहारिनि नाम ललित सरसाय ॥

॥ कुंडलियाँ ॥

(7)

सोरा सखी बिहार में बिपुल प्रेम बर अँग।

समय साधि सेवा करें पिय प्यारी के सँग ॥

पिय प्यारी के संग रहैं वर अंगन माहीं।

ज्यों दिनकर की किरनि छोडि दिनकर नहिं जाहीं ॥

भगवत रसिक अनन्य एक रस बैस किसोरा।

रुख लै सुख संचरैं सहचरी संतत सोरा ॥

(8)

पिय प्यारी पर प्रेमनिधि प्रगटे मदन मयंक।

बढत परस्पर एक से जिमि एकादस अंक ॥

जिमि एकादस अंक दुगुन दस गुन करि देखौ।

आदि मध्य अवसान एकरस रसिक बिसेखौ ॥

दयति दहाई बीच सीच सुख सर्वस कारी।

सरसावत उर हाव भाव भगवत पिय प्यारी ॥

चतुर्थ छांकी

॥ राग आसावरी ॥

(1)

अलौकिक वृक्ष विलोकौ आज ।
फूलौ फरौ हरौ नव नव रँग मंजुल मृदुल समाज ॥
थर पर कमल कमल पर कदली कदली ऊपर सुरू ।
सुरू ऊपर सुभग मनोहर नारिकेलि रस पुरू ॥
नारिकेलि पर फूल रविमुखी पाँच फूल ता माँहीं ।
जपा कुंद तिल महुवा अंबुज उपमा को कछु नाहीं ॥
आलबाल रसिया भगवत भुज देखत भावुक नैना ।
सेवत सींचत रहत रैनदिन बिमल बारि उर ऐना ॥

(2)

लालन गरवीलो गरबीली प्रिय प्राँन अधार ।
उमगि उमगि हँसि हँसि अंकौ भरि रहे दृग दृगन निहार ॥
चुंबन करत कपोल परस्पर रद छद उठत चिहार ।
भगवत रसिक सुरस बरषावत भावत नित्य बिहार ॥

(3)

लाडिली अलबेली अलबेले पिय जीवन प्रान ।
बदन मयंक अमीरस बरषत गावत मोहनि तान ॥
नवल कमल कर बीन बजावत अति गुण रूप निधान ।
मृदु सुसिक्क्याइ लाल तन चितवत गहि भगवत को पान ॥

॥ राग टोडी ॥

(4)

सब सुख सदन बदन तुव राधे ।
उपमा कमल ससी नहिं पावत भीत मान अपराधे ॥
मृदु मुसक्यानि हरति मन नैनन बंकविलोकनि ही दृग आधे ।
लेत बलाय दुहूँकर भगवत रसिक सिरोमनि गुनन अगाधे ॥

(5)

तुव मुख नैन कमल अलि मेरे ।
पलक न लगत पलक बिनु देखे अरबरात अति फिरत न फेरे ॥
पान करत मकरंद रूप-रस भूल नहीं फिर इत उत हेरे ।
भगवत रसिक भये मतवारे घूमत रहत छके मद तेरे ॥

(6)

✓ तुव मुख चंद चकोर ये नैना ।

अति आरति अनुरागी लंपट भूल गई गति पलहूलगै ना ॥

अरबरात मिलिबे को निसिदिन मिलेइ रहत मनु कबहुँ मिलै ना ।

✓ भगवत रसिक रसिक की बातै रसिक बिना कोउ समुझि सकै ना ॥

॥ राग झँझोटी ॥

(7)

राधा बदन बर जलजात ।

चिकुर नभ सीमंत बर कबि पाँति कल जलजात ॥

रूप सर ते प्रगट बर सोहत नयन जलजात ।

हास रस बचनावली बरसत मधुर जलजात ॥

कंठ कलित त्रिरेख देखत लजत बर जलजात ।

बितन वेदन हरन को हरि वैद बर जलजात ॥

बारिण छबि बर घरनि त्रैलोक्य मनि जलजात ।

रसिक भगवत स्वामिनी बर दान तरु जलजात ॥

॥ कुंडलियाँ ॥

(8)

जो जानै मानै सोई मानै क्यों बिन जान ।

पीर प्रसूती की कहा जानै बाँझ अजान ॥

जानै बाँझ अजान नपुंसक रति सुख नाहीं ।

ऐसेहि नीरस पुरुष कहा समझै रस माहीं ॥

भगवत नित्य बिहार रसिक अनुभव उर आनै ।

गूढ बात नभ जाति जाति बरही जो जानै ॥

(9)

जैसे बाँदौ वृक्ष में अमर बेलि मौहार ।

इनको बीज न पाइये ऐसेहि नित्य बिहार ॥

ऐसेहि नित्य बिहार मेघ की जर नभ माँहीं ।

गोरोचन मृगजात जात सबही में नाहीं ॥

फनिमनि बिरले होइ करी सिर मुक्ता ऐसे ।

भगवत रसिक अनन्य अनुभवी द्रष्टा जैसे ॥

पंचम झांकी
॥ राग सारभोगी ॥

(1)

भोजन करत भीमते जी के रसिक किसोर किसोरी जू।
छप्पन भोग छतीसौ ब्यंजन अँग अँग उमँग न थोरी जू॥
चार भाँति के षटरस कौरन लेत देत दुहूँ ओरी जू।
प्रेम पियूष पियत अधरन लगि तृपति न मानत जोरी जू॥
हाव भाव चुंबन परिरंभन सुरति समुद्र हिलोरी जू।
फिरि फिरि अरत लेत नहिँ अचबन रूपसुधा दूग कोरी जू॥
बिबस असावधान बिहरत दोउ कसन बसन सब छोरी जू।
जुगल केलि कल कलित कलानिधि भगवत नैन चकोरी जू॥

॥ राग सारंग ॥

(2)

अचवन लेत मोहनीमोहन।
रूप अनूप अपार अलौकिक अंग अंग प्रति जोहन॥

बचन रचन बीरी ब्रीडा जुत बसन सम्हारत सोहन।
भगवत रसिक सहचरी सन्मुख मुकुर दिखावति दोउन॥

(3)

आरत हरन आरती पिय की।
सुरत अंत अनुराग भरे अति अलक सम्हारत तिय की॥
भूषन बसन सिंगार बनावत जानि जानि रुचि हिय की।
भगवत रसिक निहारत नैनन जरनि जुडावति जिय की॥

(4)

पौढे ललित लतान तरें।
सुमन सेज सुखरासि सनेही अधरनि अधर धरें॥
उरजनि उरज जोरि कटि सों कटि लपटि भुजानि भरें।
यह रस मत्त मगन मन सोये भगवत ब्यजन करें॥

(5)

हमारी जीवन जुगल किसोर।
कुंजबिहारनि कुंज बिहारी नित नव जोवन जोर॥

भूलि न जाऊँ पलक कहुं इत उत रहों निरंतर पासा ।
 दंपति संपति दिन दुलराऊँ और न दूजी आसा ॥
 रूप माधुरी दृगन पियाऊँ श्रवन रसीली बानी ।
 अंग संग उद्गार नासिका तीनों ताप सिरानी ॥
 असन करौं उच्छिष्ट दुहुन को भूषन बसन उतारे ।
 भगवत रसिक मनाय लाडिली करौं लाल दृग तारे ॥

॥ कुंडलिया ॥

(6)

आचारज ललिता सखी रसिक हमारी छाप ।
 नित्य किसोर उपासना जुगल मंत्र कौ जाप ॥
 जुगल मंत्र कौ जाप बेद रसिक की बानी ।
 श्रीवृंदावन धाम इष्ट स्यामा महारानी ॥
 प्रेम देवता मिले बिना सिद्धि होइ न कारज ।
 भगवत सब सुखदानि प्रगट भये रसिकाचारज ॥

(7)

नहिं हिंदू नहिं तुरक हम नहिं जैनी अंगरेज ।
 सुमन सम्हारत रहत नित कुंजबिहारी सेज ॥
 कुंजबिहारी सेज छाडि मग दक्षिण डेरो ।
 रहें बिलोकत केलि नाम भगवत अलि मेरो ॥
 श्रीललिता सखि पाय कृपा सेवत सुख स्यामहिं ।
 नहिं काहू सों द्रोह मोह काहू सों है नहिं ॥

षष्ठम झांकी

॥ राग नट ॥

(1)

नैना धूमत हैं मद छाके ।
 जगे जम्हात सिथिल पट भूषन सुख संतोष न थाके ॥
 पलकन पीक अधर अंजन रद छद कपोल ललना के ।
 भगवत रसिक पोंछि अंचल मुख प्यावत अधरसुधा के ॥

(2)

अधर मद पाइ प्रसन्न भये ।

भूषन बसन सम्हारि सहचरी नव सत सहज नये ॥

लोचन मुकुर बिलोकि परस्पर चूमि कपोल लये ।

भगवत रसिक रस भरी बतियाँ कहि मन मोद दये ॥

॥ राग पूर्वी ॥

(3)

रसिकबर रसिक रसीलौ रसिया ।

अंजन दै मन रंजन कीनों खंजन दृग फसिया ॥

करि मनुहारि भुजन भरि भेंटी बदन चूमि हसिया ।

सुनि भगवत फिरि लेत बलइया करत मदन बसिया ॥

(4)

लाल एती चतुराई तुम कहँ पाई ।

जावक के मिस पाँय परत हौ करन चहत आपन मन भाई ॥

108

छल बहु भरे साधु से दीखौ सखिन बतावत सेवकाई ।

भगवत पाँइ परौ ललिता के राज करौ चिर सुखदाई ॥

(5)

मेरे प्रान जीवन धन तुही गोरी ।

उरज पानि धरि सौँह करत हों इष्ट देवता इह जोरी ॥

लावनि भरी पिया की बोलनि सुनि बिहँसी नागरि भरी ।

रीझ दई भगवत की स्वामिनि नीबी बंद कंचुकी छोरी ॥

॥ राग गौरी ॥

(6)

रस भरे राजत रसिक बिहारी ।

गौर स्याँम अभिराम रूप दोउ नव नव नेह निहारी ॥

हास बिलास करत कौतूहल प्रेम परस्पर भारी ।

नैन सैन बर बैन मैन मद छके रहत पिय प्यारी ॥

कबहुँक पाँइ परत प्यारी के प्यारौ कौतुक धारी ।

प्यारी रीझि देत आलिंगन चुंबन भरि अँकवारी ॥

109

कबहुँक रति बिपरीत करावति कबहुँ करत मनुहारी ।
कबहुँक लेत बलाइ दुहुँकर रति की करत तयारी ॥
यह सुख निरखि सखी नित प्रमुदित प्रान करैं बलिहारी ।
भगवत रसिक पियत या रस को और लगै सब खारी ॥

(7)

आरति हरत परस्पर तन की ।
सुरत अंत श्रम स्वेद निवेरत करत भावती मन की ॥
भूषन बसन सम्हारत फिरि फिरि मुकुर दिखाय दृगन की ।
भगवत रसिक बिलोकन लागे सोभा निधि निधिवन की ॥

(8)

सोभा सिंधु निधिवन और ।
निरखि नख सिख माधुरी मंजुल महल की पौर ॥
करत सब रस बारता बाँके रसिक सिरमौर ।
भावती भगवत अली लीनें भुजन भरि दौर ॥

110

॥ कुंडलियाँ ॥

(9)

संप्रदाय नवधा भगति, बेद सुरसरी नीर ।
ललिता सखी उपासना, ज्यों सिंहिन कौ झीर ॥
ज्यों सिंहिन कौ क्षीर रहै कुंदन के बासन ।
कै बच्चा के पेट और घट करै बिनासन ॥
भगवत नित्य बिहार परे सबही को परदा ।
रहे निरंतर पास रसिक बर सखी संप्रदा ॥

(10)

जैसे मिलें कुधातु के लगै कंचनै दाग ।
दूरि करै सब कालिमा जबहीं मिलै सुहाग ॥
जबहीं मिलै सुहाग रीति ललिता की जानौ ।
ज्यों जल खाँड समाइ फिरै करकट उतरानौ ॥
भगवत रसिक अनन्य महल में राजत ऐसे ।
ज्यों दृग अंजन बसै बरौनी बाहिर तैसे ॥

111

सप्तम झांकी
॥ राग कान्हरी ॥

(1)

अहो मेरे लाल पिया की भामती यह कौतुक देखौ आइ हो।
अहो हेली वृंदबिपिन सुहावनौ अरु रबितनया के तीर हो॥
हेली रसिकराय रस सों भरे इन पलटि पहिरि लिये चीर हो।
अहो हेली स्याम प्रिया भई मानिनी गोरे लाल मनावन हार हो॥
हेली मान न छाँडै मानिनी एतौ रिझवत बहुत प्रकार हो।
अहो हेली पाँयन परि बिनती करै अरु कहत रसीले बैन हो॥
हेली पीठि फेरि मुख मोरहीं एतौ करत न सूधे नैन हो।
अहो हेली नाचत गावत प्रेम सों अरु बेनु बजावै रसाल हो॥
हेली राधे कहि कहि बोलहीं सुनि बिहँसि उठी तत्काल हो।
अहो हेली बदन चूमि भेंटै तबै अरु लीने कंठ लगाइ हो॥
हेली पकीनर्द काची करै अरु यह रसिकन की रीति हो।
अहो हेली मीन चाल हठ उलटिही खेल सदा रस रीति हो॥
हेली मदन रंग भीजे दोऊ कछु सोभा बरनि न जाइ हो।
अहो हेली भगवत रसिक खिलावहीं जानत हारा जीति हो॥

1st line Missing (2)

ए दोऊ नवल किसोर नित्य निकुंज बिहारहीं॥
सखी री मदन रंग भीजे रहैं बाढे अनुराग॥
उमँगि उमँगि रस पीवहीं अधरन सों लाग॥
सखी री आलिंगन भुज भरि करैं चुंबन सुख लाय॥
परिरंभन अति चोप सों कछु सोभा बरनि न जाय॥
सखी री हार टूटि बंद छूटहीं कर कंगन फूट॥
चाव चौगुनौ चित चढौ अतिसै रस लूट॥
सखी री रद छद लसत कपोल पै दुहुँ कुच नख रेख॥
श्रमकन बदन सुहाबने रति रूप बिसेख॥
सखी री भगवत रसिक निवारहीं श्रम करहि शृंगार॥
बार बार तृन तोरही तन मन धन बार॥
सखी री खेल खेलत रहैं कहूँ भूलि न जात॥
जीव जिवावत सखिन को हिये नैन सिरात॥
भगवत रसिक बिलोकही अति आनंद उर गात॥

॥ राग जैजैवन्ती ॥

(3)

आज तो छबीली राधे रस भरी डोलहीं ।
साँवरे पिया के संग भीजी है मदन रंग
मोद की उमंग अंग गुन गथ खोलहीं ।
जैसे दामिनि घन माहीं ऐसे भामिनी
तनु माहीं लखि आपनी परछाहीं हँसि बीलहीं ।
भगवत लाल बिहारी पाई हैं कहा बर नारी
गुन रूप वैंस हमारी करत कलोलहीं ।

॥ राग सोरठ ॥

(4)

प्यारी जू की सहज अटपटी बोलनि ।
हो पिय तुम उर बसी कौन तिय पहिरे नील निचोलनि
हमहूँ ते गुन रूप आगरी पाइ कहाँ बिन मोलनि
बडे बडे नैन अरुन कजरारे बिथुरी अलक कपोलनि

धम जल बूँद मनोहर मुख पर लसत उरज नख छोलनि ।
धमंगि उमंगि सन्मुख आवत मन भावत करत कलोलनि ॥
ति के चिन्ह देखियत अंग अंग रंजित अधर तमोलनि ।
भगवत रसिक कहौ तुम साँची नाहिं करौं अनबोलनि ॥

(5)

मूली भाव भावती भोरें ।
पेठी मुरकि पीठ दें पिय उर मान आन तनु गोरें ॥
मौंह मरोर मौन मुख नीचे नैन नेह सौं टोरें ।
ख छिति लिखत अछित ललिता के लाल कहै करजोरें ॥
कियो कहा अपराध सखी मैं रहों निकट नित तोरें ।
कौन सुभाव परो प्यारी को रस में बेरस घोरें ॥
फिर उपाय समुझाय स्वामिनी रहे न धीरज मोरें ।
भगवत रसिक बलैया लै लै फिरि फिरि नाह निहोरें ॥

(6)

बंदित प्रिया पाद जलजात ।

काम रस बस स्याँम सुंदर धरि हृदय जलजात ।

करत अति आधीनता परसत दृगन जलजात ।

रसिक भगवत चूमि तल मंजुल सुमुख जलजात ।

॥ कुंडलियां ॥

(7)

बेगम अगम निगम कहैं सुगम लाडिली लाल

नित्य अनंत अनादि के भगवत रसिक दलाल

भगवत रसिक दलाल मिलै इनसों सो पावै

जप तप जोग समाधि ध्यान हरि हाथ न आवै

करि उपाय पचि मरे तरे भवसागर समदम

मिलहि न स्याँमा स्याँम कहहिं कवि कोविंद बेगम

(8)

समा नित्य बिहार को दियो बिहारिनि मोहि ।

ई प्रीति परतीति उर अंतर लीनौ जोहि ॥

अंतर लीनौ जोहि निरंतर निज धन पायो ।

क नारद सनकादि नेति निगमागम गायो ॥

भगवत यह रस रीति प्रकट परिपूरन ससमा ।

म पियूष न स्रवै भाव रूपी बिनु चसमा ॥

अष्टम झांकी

॥ देखता राग केली ॥

(1)

खचंद्र कौ दरसावौ जियरा न अब तरसावो ।

म तैन तृषित चकोर पै चितवनि सुधा बरसावो ॥

कुटी कमान ताने दृग बान बर संधाने ।

कै कटाक्षन मार के उरघाव अति सरसावो ॥

मनमोहिनी मन मोहना मन मोहिबो करौ
मुखचंद चख चकोर सदा जोहिबो करौ
घनस्याम रसिक नागर तुम होहु दामिनी
तजि मान अधर पान करौ जात जामिनी
अपराध नहीं पिय में कछु भूल तू गई
प्रतिबिंब देखि आपनो सखि पीठि क्यों दई
समुझाय कही भगवत जब लागि कान सों
सुखदान उठी आतुर भेंटी सुजान सों

॥ देखता मनर जन ॥

(3)

करि नेह नैन लगाइके फिरि मान करना किन बदा ।
तजि रोष दोष लगाइबो तजि मोद में मंगल सदा ॥
अपराध बिनु अपराध धरिबो सीख तो यह किन दई ।
धरि ध्यान गहि मुख मौन बैठी मनहुं कोउ जोगिन नई ॥
रसरीति प्रीत प्रतीति बिसरी कठिन कुच संगति किये ।
यह जानि अब परसों नहीं लगि जाय कहुं मेरे हिये ॥
सुनि बैन आतुर नैन फेरे रसिक भगवत यों कही ।
हसि कंचुकी बँद खोलि लपटी मनहुं घन दामिनि गही ॥

॥ ऐखता मदनमोद ॥

(4)

बिहारनि रँग सों आई। बिहारी उमँगि उर लाई ॥
भई रसरीति मन भाई। मनौ निधि रंक ने पाई ॥

करैं दोउ प्रेम की बतियाँ। हरैं मन नैन बहु भतियाँ।
 न जानै जात दिन रतियाँ। हँसैं बिलसैं सुभग थतियाँ।
 अनंगनि रंग बरसावैं। कुसल रस कोक सरसावैं।
 कपोलनि करनि परसावैं। नयो नित नेह दनसावैं।
 छके रहें रूप रस माहीं। पलक पलहूँ लगत नाहीं।
 बिबस अंसन दिये बाँहीं। लसै नव कुंज परछाहीं।
 कनक बेली मनौ फूली। लपटि तरु स्याँम सों झूली।
 किधौँ घन दामिनी भूली। कि भगवत सुकृत अनुकूली।

॥ देखती विधुबदनी ॥

(5)

विधुबदन दी लुनाई कहिधौँ किनौ बनाई।
 नित नित नई छबि देखिये जियरा रहै लुभाई।
 भृकुटीन की कुटिलाई मनु चाप सों चढाई।
 दृग बान से संधान के चित बित लियो छिडाई।

धरान की अरुनाई दसनानि में झलकाई।
 माधुरी मुसक्यानिया हियरा रही समाई॥
 भगवत रसिक सुखदाई दुहु करन लेत बलाई।
 सहज के अनबोलने हम पर रह्यो न जाई॥

॥ कुंडलियाँ ॥

(6)

मैथुन भखन भय सहज सबहिं सुधि होइ।
 भुभव भगवत भजन को भागवान लहि कोइ॥
 गवान लहि कोइ होइ जो भगवत अंगी।
 भगवत बिमुख न लहैं बेषधारी भव संगी॥
 भगवत रसिक बिलोकि केलि कुंजन के छिद्रा।
 तिरंग रंग रंगमगे स्याम-स्यामा तजि निद्रा॥

(7)

मी कें प्रिय कामिनी, लोभी कें प्रिय दाम।
 भगवत रसिक कें प्रिय श्री स्याँमा स्याँम॥

प्रिय श्री स्याँमा स्याँम भये नैनन को कजर
केलि बिलोकत रहैं और नहिं आवै नजर
ते श्रावन के सूर कहूँ बिरले निस्कामी
कहन सुनन के बहुत जगत में भक्त सकामी

नवम झांकी

॥ राग सैन भोगी ॥

(1)

ब्यारू करत लाल दिन दूलह दुलहिन कुंजबिहारी ज
दरस परस रुचि बढी परस्पर मोद बिनोद अहारी ज
चुंबन चोस्य लेहि आलिंगन अधर सुधारस वारी ज
भक्ष्य भोज्य परिरंभन षटरस बहुबिधि सौंज सँवारी ज
अचवन लेत देत कर बीरी बचन रचन सुखकारी ज
भगवत रसिक चकोर नैन बिबि बदन चंद्र बलिहारी ज

॥ राग बिहागरी ॥

(2)

रति करत पिया सुख दैनी ।
पन बसन सिंगार बनाई स्याँम सखी मृगनैनी ।
गवत रसिक बाँह गहि लीनी चली कुंज रति सैनी ॥

(3)

पिया पिय नैन अरुनता छाई ।
ग अंग अँगरात मदन बस फिरि फिर लेत जंभाई ॥
मल कुसुम बिबिध नाना रँग सरस सुगंध सुहाई ।
म बिचित्र ललित अपने कर रचि रुचि सेज बनाई ॥
ति अनुराग भरी श्रीस्याँमा मिलि पौढी किलकाई ।
गवत रसिक रसमसे दोऊ करत केलि मन भाई ॥

(4)

हमारे नैनन नित सुख देत ।

कुंजबिहारिनि कुंजबिहारी चितवनि चित चुरि लेत ॥

सुरति समर में जुरे सुभट दोउ सुमन तल्प सुख खेत ।

भगवत रसिक किसोरी किसोर रंगे रंग झखकेत ॥

(5)

सुरति सुख सोये स्याँमा स्याँम ।

गल भुज दिये परस्पर दोऊ अंग अंग अभिराम ॥

तनु मन उरझि रहे सुरझत नहिं जामिनि तीजे जाम ।

भगवत रसिक पलोटत पाँयन सहचरि सब सुख धाँम ॥

॥ माँझी ॥

(6)

हैं हम रसिक अनन्य प्रिया पिय कुंज महल के बासी ।

नई नई केलि बिलोकें छिन छिन रति विपरीत उपासी ॥

बीरी बसन सुगंध आरसी रुख लै करत खवासी ।

देत प्रसाद प्रेम सों हँसि हँसि कहि कहि भगवत दासी ॥

124

॥ कुंडलियाँ ॥

(7)

देखे हाट बजार सब जहाँ तहाँ पोति बिकाय ।

लिये जवाहिर जौहरी बिनु गाहक फिरि जाय ॥

बिनु गाहक फिरि जाय बलाहक ऊसर बरसें ।

छप्पन भोग बनाय कहा बनचर के परसें ॥

ऐसेहि कर्मठ लोग धर्म रति बरन बिसेखे ।

भगवत रसिक अनन्य स्वाद भेदी कहूँ देखे ॥

(8)

सेवी नित्य बिहार के रसिक अनन्य नरेस ।

बिधि निसेध क्षिति छाँडि कें मडे प्रेम नभदेस ॥

मडे प्रेम नभ देस दिवाकर रूप बिराजै ।

परस न पावैं कोइ दरश करि कर्मठ लाजै ॥

भगवत कोक बिसोक कमल फूले रस भेवी ।

तस्कर लुके उलूक मंदति बिषयन सेवी ॥

125

दशम झांकी

॥ राग राछरौ ॥

(1)

प्यारी राधे सावन मन भावन भयो चलि सुरति हिंडोरा झूलि ।
 प्यारी राधे माथे मुकुट सुहावनो अरु नचत सिखर चढि मोरे ॥
 प्यारी राधे घन गरजत मुरली बजै अरु दामिनि मुरि मुसक्यानि ।
 प्यारी राधे बचन रचन कल कोकिला अरु मुक्तावलि बग पाँति ॥
 प्यारी राधे स्याम घटा तनु अति बनो अरु इंद्र धनुष बनमाल ।
 प्यारी राधे अरुन बसन बादर कसे अरु अनुकूली बर साँझ ।
 प्यारी राधे हरित भूमि हरषी हृषी अरु इंद्र बधू अवतंस ॥
 प्यारी राधे नवल नेह उलही लता अरु किसलय दल पदपान ।
 प्यारी राधे संतत आस बिलास की अरु चलत पवन झकझोर ॥
 प्यारी राधे प्रेम पुलक रस बरसहीं अरु सरसत सरित अनंग ।
 प्यारी राधे भगवत उर सरवर भर्यौ अरु फूले दृग जलजात ॥

॥ राग मलार ॥

(2)

ललना लाल हिंडोरे झूलैं ।
 सावन में मन भावन मन की मन भावन करि फूलैं ॥
 नीरद नवल नाहु उर ऊपर दामिनि भामिनि भूलैं ।
 भगवत रसिक झुलावत गावत गहि डाँडी भुजमूलैं ॥

(3)

झूलत दोउ नव निकुंज मधि ठाढे ।
 झोटा देत गहें भुज डाँडी अंग अनंगन बाढे ॥
 नवसत साजि सिंगार सहचरी भूषन ग्यारह साढे ।
 भगवत रसिक प्रेम परिपूरन देत अलिंगन गाढे ॥

(4)

मेरी अलक लडी अलबेली ।
 झूलत रति बिपरीत हिंडोरे नाहु अंस भुज मेली ॥
 मचकत जोवन जोर परस्पर परिरंभन पग पेली ।
 गावत राग मलार मनोहर भगवत रसिक सहेली ॥

(5)

नितही प्रति देखि देखि गुन गाऊँ।
अति उदार सुकुमार मनोहर जुगल किसोर लडाऊँ॥
अंग अंग रस रंग माधुरी पीवत जीव जिवाऊँ।
भगवत रसिक रसीली बातें कहत सुनत सुख पाऊँ॥

॥ कुंडलियाँ ॥

(6)

डोलै अपनी गैल गहि छाँडि पराई दीन।
नागर रसिक अनन्य जग ज्यों जमुना की मीन॥
ज्यों जमुना की मीन लीन जमुना जल माहीं।
गंगा आदि नदीस और जल परसत नाहीं॥
भगवत नित्य बिहार बारता अनुभव खोलैं।
गौर स्याम छवि छके नैन कहूँ नैंक न डोलैं॥

(7)

नागर रसिक अनन्य संग वर वृंदावन जान।
गान बिहारी कौ दरस बानी जमुना पान॥

बानी जमुना पान पुलिन पुलकावलि तन में।
अनुभव रास बिलास बिहारिनि प्रगटत मन में॥
भगवत नित्य बिहार प्रेम उमगन रस सागर।
कुंज कुटी अभिराम भावना निरखै नागर॥

एकादश झांकी

॥ राग केदारी ॥

(1)

नाचत दोऊ रहस में रँग भीनें।
हाव भाव उपजत अँग अँगन कोक कला मन दीनें॥
बाजत मधुर मृदंग किंकिनी नूपुर ताल नवीनें।
होडी होडा तान तिरप गति लेत नहीं कोउ हीनें॥
राकारति रजनी कर आनन उदित मदन बस कीनें।
रीझि रीझि भगवत की स्वामिनि लाल अंक भरि लीनें॥

(2)

लाडिली लालन दोऊ रंग भरे अंग अंग नाचति

सुरति रंग कोक कला कुसल दोउ उदित मुदित मन ।

हाव भाव भृकुटि भंग उपजत छबि तरंग

खेलत अंग संग दोउ उरझे हैं प्रेम पन ॥

उमँगि उमँगि करत केलि अंजन भुज दंड मेलि

पुलकि पुलकि लपटि दोउ बिलसत धनी धन ।

भगवत रसिक लाल श्रमित भई नवल बाल

रीझि रीझि अंचल दोउ पोंछत मुख स्वेदकन ॥

॥ राग बसंत ॥

(3)

नवल दोउ आजु बसंत से फूले ।

गोरी किसोरी के अंस दिये भुज स्याँम छिपें भुज मूले ॥

सहज सिंगार अनंग के रंगनि सोहत पीत दुकूले ।

रंग में रंग बढावति लाडिली लाल हिंडोरे से झूले ॥

यह सुख नित्य दिखावत नागरी नाहु भये अनुकूले ।
भगवत रसिक बिलोकत यह छबि नैन कुरंग से भूले ॥

(4)

पिय प्यारी सोहत हैं बसंत ।

दोउ मदन मुदित भये सुरति अंत ॥

कनकलता मृदु नवल बाल ।

लपटी मरकत मनि पिय तमाल ॥

गौर स्याँम सोभा बिसाल ।

श्रम बूँदन अतिसें रसाल ॥

नव जोबन उलहो अंग अंग ।

किसलय दल कर अँगुरी सुरंग ॥

परसत फल बिमल उरज उतंग ।

मदपान करत कच कुटिल भृंग ॥

बिबिध सुमन फूले सुबास ।

डोलनि मंजुल मारुत बिलास ॥

बोलन कल कोकिल कीर पास।

मनसिज बस करनी मंद हास॥
ललितादिक सींचत प्रेमवारि।

छबि पान करत लोचन निहारि॥
गावत भगवत जस अति उदार।

यह नित नवतन रस वन बिहार॥
(5)

यह छबि देखिये नित नैन।

नवल नागर नागरी पर वारिये रति मैन॥
अधर मद पीवत पिवावत तृपति नहिं दिन रैन।
प्राण पोषत परस्पर कहि कहि रसीले बैन॥
सहज सरद बसंत संतत सहचरी उर ऐन।
ललित बलित बिचित्र द्रुम बेली सरस सुखदैन॥
प्रेम प्रीति प्रतीति छिन छिन बढ़त तन मन चैन।
रसिक भगवत माधुरी मुसिक्यानि मन हरि लैन॥

॥ कुंडलियाँ ॥

(6)

अनुभव बिनु जग आँधरौ बस्तु न दीखै कोइ।
मुकुर दिखाए होत कह आनन जात न जोइ॥
आनन जात न जोइ अर्थ बानी को कहिबो।
सुने न होइ प्रतीति बिना देखें उर दहिबौ॥
बहु बिधि मर्दन करें नहीं चैतन्य होइ शव।
भगवत रस की बात कहा जानै बिनु अनुभव॥

(7)

बानी बीजक बस्तु कौ बीजक बस्तु न कोइ।
बीजक बस्तु बतावहीं लहैं जासु की होइ॥
लहैं जासु की होइ और की और न पावैं।
गावैं सब संसार हाथ बिरले के आवैं॥
ऐसेहि नित्य बिहार स्याँम स्याँमा सुखदानी।
भगवत रसिक अनन्य गूढ गुन गावत बानी॥

॥ होरी धमार राग काफी ॥

(1)

मन मोहन मोही मोहनी हो ।
अहो मेरी आली नख-सिख रूप बनाई ॥
अँग अँग राग रंग केसरि कौ पीत दुकूल उतारि ।
पहिरि लिये प्यारी के अभरन नील निचोल सम्हारि ॥
सीसफूल सुठि सरस चंद्रिका बेनी रुचिर बनाई ।
माँग सिंदूर भरी मोतिन सों पाटिन सौँधि लगाई ॥
बैना भाल बिसाल जगमगे मृगमद बेंदी बाल ।
अंजन दियो किन्नी मन रंजन खंजन नैन बिसाल ॥
नासा सुभग रसीली बेसरि नव मुक्ता निरमोल ।
कानन करनफूल अति राजैं इक इक अलक कपोल ॥
अधर अरुन बीरी दसनावलि रसना रस बरसंत ।
चिबुक चारु मसि बिंदु मनोहर हँसि मोल लियो रति कंत ॥

चौकी पदिक हार हिय राजत कंठ जँगाली पोत ।
कंचुकि कसन बसन चटकीले ता बिच उरज उदोत ॥
अंगद भुजन मृदुल बलयावलि कंकन पहुँची जोग ।
मेंहदी पानि अँगुरियन मुँदरी मानौ अद्भुत पन्नग भोग ॥
किंकिनि कलित ललित नीबी बँद पग नूपुर झनकार ।
गज गति चलत लंक लचकै छबि जावक भूलो मार ॥
बनि ठनि चलें नवल नागरियै मदन मोद उपजाइ ।
देखि हँसी प्यारी पीतम को लीन्हें कंठ लगाइ ॥
यह सुख दंपति को निसिबासर देखत भगवत नैन ।
हृदय सरोज सिरावत इहि बिधि कहत बनै नहिं बैन ॥

(2)

नव कुंज सदन में आजु रँगिली होरी ।
इत स्याँमा उत स्याँम मनोहर खेलत उमँग न थोरी ॥
छलबल घात लगावत मोहन अंग बचावत गोरी ।
सावधान दोउ सुघर शिरोमनि अपनी अपनी ओरी ॥

कोक कला कल केलि परस्पर जोवन जोर किसोरी ।
 चतुर खिलार लाडिली लालन तुम जिन जानों भोरी ॥
 हा हा करौ परो पायन अब ना चलि है बरजोरी ।
 भगवत रसिक उदार स्वामिनी देहैं सर्वस छोरी ॥

(3)

एरी हेली अलक लडैती के संग
 अलक लडैतो खेलहीं रँग होरी ।
 एरी हेली पिय पिचकारी प्रेम
 उमँगि उमँगि रँग रेलहीं रँग होरी ॥
 एरी हेली प्यारीजू के अति अनुराग
 बूकाबदन मेलही रँग होरी ।
 एरी हेली डफ किंकिनि कठतार
 बलया बाजत केलिही रँग होरी ॥

136

एरी हेली कुटिल कटाछिन मारि
 करत दुहुँ दिसि झेलहीं रँग होरी ।
 एरी हेली भगवत रसिक रसाल
 सुरति सुधानिधि हेलही रँग होरी ॥

॥ राग खम्माच ॥

(4)

गुन निधि नागरी नवरंग ।
 मदन जोवन मथि निकासे रतन चौदह अंग ॥
 सीस मंदर बासुकी कचरूप जल गंभीर ।
 सुरति सुख लहरैं उठैं सैवाल पर हर चीर ॥
 बदन चंदा अधर अमृत बारुनी मृदु हासि ।
 कंबु कंठ तुरंग लोचन मान विष की रासि ॥
 काम तरुबर सुभग सुरभी कुच कपोल रसाल ।
 जघन रंभा नाभि लछिमी गज नितंब बिसाल ॥

137

चरन चिंतामनि मनोहर कर धनंतर सोइ।
भौंह धनुष बिलोकि भगवत रसिक रसबस होइ॥
सुर असुर ईश्वर अनीश्वर सकल साँवल गात।
जथा जोग सँजोग संपति सहचरी निज हात॥

(5)

हमारी संपति दंपति केलि।

दिन दिन बढत घटत नहिं कबहुँ सुख सागर की रेल॥
अतुलित अमित अनूपम अद्भुत रसकी ठेला ठेल।
भगवत रसिक दृगन में दीनी स्याँमा स्याँम सकेल॥

॥ मंज ॥

(6)

नित्य बिहार स्याँम स्याँमा को कहि प्रत्यक्ष दरसायो।
रसिक अनन्य स्वाद भेदी हित अगद राज बरसायो॥
अमल अनूप परम उज्जल रस उर अंतर सरसायो।
भगवत रसिक अनन्य आभरन नहिं नीरस परसायो॥

(7)

यह रस रीति प्रिया प्रीतम की दिव्य स्वाति जल जैसे।
विषयी ज्ञानी भक्त उपासक प्रापत सबकों कैसे॥
कदली कमल पपीहा सीपी पात्र भेद गुन तैसे।
भगवत बीज विषमता नाहीं भूमि भाग्य फल ऐसे॥

॥ कुंडलियाँ ॥

(8)

काहू दई न लई कोई विद्यमान दरसाय।
ज्यों मनियारौ उरग मनि लै आवै लै जाय॥
लै आवै लै जाय बस्तु रसिकन की ऐसे।
निसि दिन देखत रहैं कृपन निज संपति जैसे॥
भगवत रसिक सुकेलि स्याँम स्याँमा अवगाहू।
रही दृगन भरिपूर भेद जानौं नहिं काहू॥

(9)

चंदा के संग चाँदनी सूरज के संग घाम।
ईश्वर के संग ईसता अनुभव आठौं जाम॥
अनुभव आठौं जाम सकल सोभा संग संपति।
सब सुख संग संतोष उपासक के संग दंपति॥
भगवत रसिक चकोर कमोदिनि लहत अनंदा।
नीरस चकई कमल देखि दुख पावत चंदा॥

(10)

भगवत रसिक अनन्य मनि गौर स्याँम रँग रात।
अमर कोस के धूमलौं मृगमद छोड न जात॥
मृगमद छोड न जात गही ज्यों हारिल लकडी।
चुंबक लोह न तजै दारु पावक जिमि पकडी॥
गुन बयारि तनु लगै डिगै नहीं मनसा नगवत।
संतत स्याँमा स्याँम धाम कीनों उर भगवत॥

(11)

भगवत स्याँमा स्याँम कौ पावक रूप बिहार।
नहिं समर्थ खगराज की करै चकोर अहार॥
करै चकोर अहार किलकिला जलचर पावैं।
साहसीक मृगराज दसन ते आमिष लावैं॥
ऐसेहि रसिक-अनन्य और नर नागर खगवत।
सेंघ पराई तजौ भजो बित माफिक भगवत॥

॥ दोहा ॥

(12)

नव द्वादश झांकिन कह्यो अद्भुत नित्य बिहार।
भगवत रसिक अनन्य संग जीवन जुगल निहार॥

(13)

यह अनन्य रसिकाभरन धारैं रसना नैन।
प्रीति सहित ताके हिये करै बिहारी ऐन॥

श्री अनन्य निश्चयात्म ग्रंथ उत्तरार्द्ध

॥ राग देसी ॥

(1)

हमैं बर गुरु गनेस हैं दीनों ।
जल भरि सुंड फिराय सीस पर संस्कार सुभ कीनों ॥
दै प्रसाद परतीति बढाई दुख दारिद सब छीनों ।
अपने पाँच रूप दरसाए सुख उपजाइ नबीनों ॥
ब्यापक पूज्य सखी आचारज अति ऐश्वर्य प्रबीनों ।
लोक बेद भय भर्म भगाये ताप सिराये तीनों ॥
आनंद घन को पद दरसायो दंपति रति रस भीनों ।
भगवत रसिक लडैती लालन ललित भुजन भर लीनों ॥

॥ कुंडलियाँ ॥

(2)

नैनन देखों और नहिं श्रवन सुनों नहिं और ।
घान न सूँघों और कछु रसना कहों न और ॥

रसना कहों न और त्वचा परसों नहिं औरै ।
कुँजबिहारी केलि झेलि इंद्रिन सब ठौरै ॥
भगवत रसिक अनन्य कोक उपदेसों सैननि ।
बैनन मैं जगाय रैन दिन देखों नैननि ॥

॥ सवैया ॥

(3)

बैनि गुही मृगनैनि कि मोहन मेचक मंजु महा मखतूली ।
मोतिन माँग भरी अनुराग रही बर भामिनि यामिनि फूली ॥
बन्दन बिंदु बसौ उर भाल सु चंद मैं चंद बधूरहि भूली ।
अंजन दै कर कंजन सों दृग खंजन आइ अनंग कि हूली ॥

(4)

खंजन मीन कुरंग ते सुंदर कंज से अंजन रंजित जैसे ।
दीरघ गर्व भरे भगवंत चलैं जुग बान मनोजहि जैसे ॥
तापर तानत कानन लौं बर भौंह सरासन साधि अनैसे ।
प्यारि सुरूप बिलोकि नये बलि देख बिहारि के नैन जु ऐसे ॥

॥ पद ॥

(5)

अपूरब पर्यौ ग्रहण को जोग ।
चन्दा झपटि राहु को पकरत करत आपनो भोग ॥
जानत नहीं ज्योतिषी देखत नित्य उपासक लोग ।
भगवत रसिक मिथुन के जापक चाहत नहीं बियोग ॥

(6)

✓ परस्पर दोउ चकोर दोउ चंदा ।
दोउ चातक दोउ स्वाति दोऊ घन दोउ दामिनी अमंदा ॥
दोउ अरबिंद दोऊ अलि लंपट दोउ लोहा दोउ चुंबक ।
दोउ आसक महबूब दोऊ मिलि जुराफा अंबक ॥
दोऊ मुदार दोउ मोर दोऊ मृग दोऊ राग रस भीने ।
दोउ मनि बिसद दोउ बर पन्नग दोऊ वारि दोउ मीने ॥
भगवत रसिक बिहारिनि प्यारी रसिक बिहारी प्यारे ।
दोउ मुख देखि जियत अधरामृत पियत होत नहिं न्यारे ॥

(7)

यह दिव्य प्रसाद प्रिया पिय को ।
दरसत ही मन मोद बढावत परसत पाप हरत हिय को ॥
पावत परम प्रेम उपजावत भुलवत भाव पुरुष तिय को ।
भगत रसिक भाव तो भूषन तिहि छिन होत जुगल जिय को ॥

॥ भक्त नामावली ॥

(8)

हम सों इन साधुन सों पंगति ।
जिनको नाम लेत दुख छूटत सुख लूटत तिन संगति ॥
मुख्य महंत कामरति गनपति अज महेस नारायन ।
सुर नर असुर मुनी पक्षी पसु जे हरि भक्ति परायन ॥
बाल्मीक नारद अगस्त्य सुक ब्यास सूत कुलहीना ।
सबरी स्वपच बसिष्ठ बिदुर बिदुरानी प्रेम प्रवीना ॥
गोपी ^{1/14} द्रोपदी कुंती, आदि पंडवा ऊधो ।
विष्णु स्वामि निंबारक माधो, रामानुज मग सूधो ॥

लालाचारज धनुरदास कूरेस भाव रस भीजै ।
 ज्ञानदेव गुरु सिष्य त्रिलोचन पटतर को कहि दीजै ॥
 पद्मावती चरन कौ चारन कवि जयदेव जसीलो ।
 चिंतामनि चिद रूप लखायो बिल्वमंगलहि रसीलो ॥
 केशवभट्ट श्रीभट्ट नारायणभट्ट गदाधरभट्टा ।
 बिट्ठलनाथ बल्लभाचारज वृज के गूजर जट्टा ॥
 नित्यानंद अद्वैत महाप्रभु सचीसुवन चैतन्या ।
 भट्टगुपाल रघुनाथ ^{जीव अरु} गुसाई मधू गुसाई धन्या ॥
 रूप सनातन भजि वृंदावन तजि दारा सुत सुंपति ।
 व्यासदास हरिबंस गुसाई दिन दुलराई दंपति ॥
 श्रीस्वामी हरिदास हमारे बिपुल बिहारनि दासी ।
 नागरि नवल माधुरी बल्लभ नित्य बिहार उपासी ॥
 तानसैन अकबर करमेंती मीरा करमाबाई ।
 रतनावती मीरमाधो रसखानि रीति रस गाई ॥

अग्रदास नाभादि सखी ये सबै राम सीता की ।
 सूर मदनमोहन नरसी अलि तस्कर नव नीता की ॥
 माधोदास गुसाई तुलसी कृष्णदास ^{परमा} सखानंद ।
 विष्णुपुरी श्रीधर मधुसूदन पीपा गुरु रामानंद ॥
 अलि भगवान मुरारि रसिक स्यामानंद रंका बंका ।
 रामदास चीधर निष्किंचन सहान भक्ति निसंका ॥
 लाखा अंगद भक्त महाजन गोविंदनंद प्रबोधा ।
 दास मुरारि प्रेमनिधि बीठल दास मथुरिया योधा ॥
 लालमती सीता प्रभुता झाली गोपाली बाई ।
 सुत बिष दियो पूज सिलपिल्ले भक्ति रसीली पाई ॥
 पृथीराज खेमाल चतुर्भुज राम रसिक रस रासा ।
 आस करन मधुकूर जयमल नृप हरिदास जनदासा ॥
 सैना धना कबीरा नाभा कूबा सदन कसाई ।
 बारमुखी रैदास सभा में सही न स्याम सहाई ॥

चित्रकेतु प्रह्लाद बिभीषण बलि गृह बाजै बावन ।
जामवंत हनुमंत गीध गुह किये राम जे पावन ॥
प्रीति प्रतीति प्रसाद साधु सों इन्हें इष्ट गुरु जानो ।
तजि ऐस्वर्य मरजाद बेद की तिनके हाथ बिकानो ॥
भूत भविष्य लोक चौदह में भये होय हरि प्यारे ।
तिन तिन सों व्यवहार हमारो अभिमानिन ते न्यारे ॥
भगवत रसिक रसिक परिकर करि सादर भोजन पावैं ।
ऊँचौ कुल आचार अनादर देखि ध्यान नहिं आवैं ॥

॥ कुंडलियाँ ॥

(9)

पारस सौ धन परिहर्यौ सेवक अकवर साहि ।
श्रीस्वामी हरिदास सम और बतावों काहि ॥
और बतावा काहि अवधि वैराग्य ज्ञान की ।
भक्ति सुमूरतिवंत प्रेम निधि दसा ध्यान की ॥
नित्य बिहार अधार प्रगट सेवा नहिं आरस ।
भगवत रसिकनरेश मिले गुरु पूरे पारस ॥

॥ कवित सिंहावलोकन ॥

(10)

पायन अष्टौ सिद्धि नवोनिधि आनि बसे तजि मान सुभायन ।
भायन सों भरि इंदिरा आदि पदारथ चार करैं गुन गायन ॥
गायन गोपद सिंधु भये त्रसरेनु भये गिरिराज परायन ।
राय न रंक रहैं दरसैं परसैं अलि श्री हरिदास के पायन ॥

(11)

पायन जाय पर्यो तब तें दुख दोष हरे सुख दे सरसायन ।
सायन को जस गावत बेद पुरान महाजन होत परायन ॥
रायन बाँके बिहारी के जीवन हैं सरकार बिहारिनि जायन ।
जाय न जोगिन की मनसा सुमिलै परि श्रीहरिदास के पायन ॥

(12)

पावन पानि धर्यो जब सीस किये जन के अघ ओघ नसावन ।
सावन हैं बरसैं करुना सरसे हिय नैन भयो मन भावन ॥
भावन सों बर बेगि मिल्यो भ्रम दूरि कर्यो तम-ताप सिरावन ।
रावन रंक रह्यो जब जाइ धर्यो सिर श्रीहरिदास के पावन ॥

(13)

नेति कहैं सब बेद पुरान धरैं मुनि ध्यान थके मन जातन ।
सम्भु मुरारि जपें मुख चार बिना अधिकार बिहार समातन ॥
नित्य नवीन धरे तुन तीन बडे रसलीन प्रवीन अघातन ।
है सुखदानि परी यह बानि पियें जल श्रीहरिदास के हातन ॥

(14)

अरि पान करैं दृग बारुनि रूप छके अति घूमत नेह भरे ।
भरिके उमगे अनुराग सने मन प्रेम सरोवर माझ परे ॥
परखे बहुरत्न अमोल घने तहँ दंपति संपति लै उबरे ।
बलि बाँके बिहारी बिहारिनि की उर श्रीहरिदास के आनि अरे ॥

॥ कुंडलियाँ ॥

(15)

रुचि लै शुचि सेवा करै सेवक कहिये सोय ।
तनु मन धन अर्पन करै रहैं अपनपौ खोय ॥

रहैं अपनपौ खोय द्रवैं तब हरि गुरुदेवा ।
अनमाँग्यो सब मिलैं गूढ गुन जानें भेवा ॥
संचित क्रिय प्रारब्ध कर्म दुख जाइ सबै मुचि ।
भगवत रसिक कहाय क्रिया त्यागें अपनी रुचि ॥

(16)

करता कृत जानें नहीं माने निज करतूत ।
ते प्राणी दुख पावहीं लग्यो अविद्या भूत ॥
लग्यो अविद्या भूत कहै द्विज रक्षा करिहौं ।
अर्जुन मेरा नाम नहीं पावक में जरिहौं ॥
कर गहि स्याम बचाय बतायो जो सिसुहर्ता ।
भगवत रसिक नरेस सकल कर्तन कौ कर्ता ॥

(17)

चलनी में गैया दुहैं दोष दइ को देहिं ।
हरि गुरु कह्यो न मानही किया आपनौ लैहिं ॥

कियो आपनौ लेहिं नहीं यह ईश्वर इच्छा।
देश काल प्रारब्ध देव कोउ करहि न रक्षा॥
मूरख मरकट मूठ कीर हठि तजै न नलिनी।
कहि भगवत कह करै भाग भौंडे कौ चलनी॥

(18)

अनहोनी नहिं होइ कछु होनी मिटै न कोय।
देखौ सीता दसरथै अति समर्थ तहँ दोय॥
अति समर्थ तहँ दोय रामभर्ता बसिष्ठ गुरु।
यदुबंसिन को नास भयो देखत परमेश्वर॥
पारीछत उर ब्याल मृतक पहिरायो मौनी।
भगवत इच्छा जानि नहीं यामें अनहौनी॥

(19)

देही कौ देखैं नहीं जो देखैं सो देह।
तीनि भाँति है जात सो बिष्टा कृमि कै खेह॥

बिष्टा कृमि कै खेह गेह मल मूत्र जान कौ।
तौल नहीं तरवार मोल सब करत म्यान कौ॥
सारासार बिचार नहीं श्रुति सुमृति तेही।
तिनहिं न भगवत मिलै देह मानत जे देही॥

(20)

जाति जाति में जात सब सबही जाति कुजाति।
रसिक अनन्य अजात की कहौं कौनसी जाति॥
कहौं कौनसी जाति सजाती मिलैं सुजानै।
बिमुख बिजाती देह खेह की जाति बखानै॥
निज स्वरूप नहिं लखै बिबादी बात बात में।
भगवत भक्त न तेय जक्त सब जाति जाति में॥

(21)

जासों सपरस चाहिये तासों अपरस नित्त।
जासों अपरस चाहिये तासों चिभुकौ चित्त॥

तासों चिभुकौ चित्त भई बिपरिति बुद्धि अब।
 अशन बसन आचार कनक कामिनि राचें सब॥
 भगवत रसिक अनन्य करें स्पर्धा तासों।
 पतित होइ गिरि परैं परम पद हूँ तें जासों॥

(22)

परमेश्वर परतीति नहिं पैसन की परतीति।
 बिनु भगवत भवनिधि परे गेही कहा अतीति॥
 गेही कहा अतीत स्याम सर्बसु धन भूले।
 कनक कामिनी देखि रहैं निसि बासर फूले॥
 दिन द्वै प्रभुता पाय कहैं हम हीं सर्वेश्वर।
 महा मोह मद पियें जियें कैसे परमेश्वर॥

(23)

पैसा पापी साधु कौं परसि लगावैं पाप।
 विमुख करें गुरु इष्टतें उपजावै संताप॥

154

उपजावै संताप ज्ञान वैराग्य बिगारै।
 काम क्रोध मद लोभ मोह मत्सर सिंगारै॥
 सब द्रोहिनि मैं सिरें भक्त द्रोही नहिं ऐसा।
 भगवत रसिक अनन्य भूल जिन परसौ पैसा॥

(24)

बिष्टा कौ सूकर लरै भिरै बचन कौ श्वान।
 ऐसे लोभी दाम कौ कामी जुवती ज्वान॥
 कामी जुवती ज्वान जगत में गुरुपद जाकौ।
 परै पढे पर धूरि बिमुख ह्वै जोरें ताकौ॥
 परमारथ कौ पीठि दीठि ब्योहार प्रतिष्ठा।
 भगवत जन तजि भजें बडाई सूकर बिष्टा॥

(25)

आवै जो सो चून कौ जहँ जइये तहँ चून।
 दियो चून चस्मा चखनि भक्ति भाव भयो नून॥

155

भक्तिभाव भयो नून साधु कौ रूप न सूझै।
 रहे मान मद बूड और की औरै बूझै॥
 हरि गुरु साधु विहाय आपनी प्रभुता गावै।
 भगवत स्याँमा स्याँम कहो उर कैसे आवै॥

(26)

चरचा कौ सब जग फिरै बस्तु न चरचै कोइ।
 हारि जीति अटकै सबै तनु धन जोवन जोइ॥
 तनु धन जोवन जोइ भये गुरु मानी डोलैं।
 परकी सुनैं न बात आपनी गढि गढि छोलैं॥
 भगवत रसिक अनन्य कियो नहिं तिन सों परचा।
 लरें वृषभ लौं दौर पौरि पर तजै न चरचा॥

(27)

गेही संग्रह परिहरै संग्रह करै बिरक्त।
 हरि गुरु द्रोही जानिये आज्ञा तै बितिरिक्त॥

आज्ञा तै बितिरिक्त होय जमदूत हवालें।
 अष्टबिंसति निरय अधोमुख करि तहँ घालें॥
 भगवत रसिक अनन्य भजौ तुम स्याम सनेही।
 संग दुहुन कौ तजौ वृत्ति बिनु बिरक्त गेही॥

(28)

माया को सब जग भजै माधो भजैं न कोय।
 जो कदापि माधो भजै माया चेरी होय॥
 माया चेरी होय रहै चरनन लपटानी।
 ज्यों मलयज के संग सहज सौरभ सुखदानी॥
 भगवत रसिक अनन्य होय सतगुरु की दाया।
 माधों सों मन लगै मोह मद छूटै माया॥

(29)

आसा जिज्ञासा नहीं नहिं आसा उपदेस।
 नाम रूप रसना चखनि यह समझै को देस॥

यह समझै को देस सहज सब सों नहिं बोलैं।
बोलैं समयो पाय ग्रंथि संसय की खोलैं॥
भगवत रसिक अनन्य भानु लौं करें प्रकासा।
हरैं तिमिर अज्ञान ज्ञान दे पुजवें आसा॥

(30)

जाको जैसी लखि परी तैसी गावै सोय।
बीथी भगवत मिलन की निश्चय एक न होय॥
निश्चय एक न होय कहैं सब पृथक् हमारी।
श्रुति सुमृति भागौत साखि गीता दे भारी॥
भूपति सबन समानि लखै निजु परजा ताको।
जाको जैसो भाव सुपोषै तैसौ ताको॥

(31)

हाथी देख्यो आँधरन निज मन के अनुमान।
कान पूँछ पद पीठि गहि कस्यौ सबन परमान॥

कस्यौ सबन परमान बिटौरा सूप पेट तर।
झगरैं संत महंत निगम आगम पुरान बर॥
भगवत रसिक अनन्य दृष्टि बर कीजै साथी।
जिन देख्यो गुन रूप अंग हिय में हरि हाथी॥

(32)

ईस्वर बाजीगर रच्यो जग जेवरी कौ साँप।
जीव जमूरा मेलि गल सुर नर मुनि सब काँप॥
सुर नर मुनि सब काँप बिषयिन ब्यापी माया।
फन काढे फुसकरै जहर जन लगै न काया॥
भगवत रसिक समर्थ गुरू जिहि जुक्ति जनाई।
जानि भयो तिहि तुल्य भूलि नहिं जाय सुभाई॥

(33)

बोरे बहिरे बाबरे अंधे लूले पंग।
बढैं प्रतिष्ठा नरन की हीन होइ षट अंग॥

हीन होइ षट अंग रंग लागैं नहिं तिनकौ।
 कहा किये उपदैस मंत्र साधन बहु जिनकौ॥
 ऐसिन को करि आस फिरैं गुरु घर घर दौरे।
 नहिं भगवत बिस्वास भागवत बकि भये बौरे॥

(34)

आये सँग नहिं सँग गये मग में भयो मिलाप।
 मोह फाँस जग बँधि रह्यो बिछुरे करत बिलाप॥
 बिछुरे करत बिलाप मानि सुत पित पति माता।
 स्वसुर जमाई जुवति सुहृद गुरु सिष धन भ्राता॥
 निज अनुभव की भूल बिभव भगवत बिरमाये।
 को हम कहँ को जात कहाँ ते किहि लगि आये॥

(35)

सुनि भगवत नहिं चल परै कैसे धरिये धीर।
 बढी बुढाती बैस बहु सिस्नोदर की पीर॥

सिस्नोदर की पीर घेरि इंदिन मन लीन्हो।
 तुव पद बिमुख कराय बिषय बंधक में दीनौ॥
 अपनी ओर निहारि निहारौ नहिं याके गुन।
 रसिक राय सिरमौर श्रवन दै मम बिनती सुन॥

॥ छप्पे ॥

(36)

प्रथम सुनै भागौत भक्त मुख भगवत बानी।
 द्वितिय आराधै भक्ति ब्यास नव भाँति बखानी॥
 तृतीय करै गुरु समुझि दक्ष सर्वज्ञ रसीलौ।
 चौथे होइ बिरक्त बसै बनराज जसीलौ॥
 पाँचें भूलैं देह निज छठें भावना रास की।
 सातें पावैं रीति रस श्रीस्वामी हरिदास की॥

(37)

कुंजन ते उठि प्रात गात जमुना में धोवैं।
 निधिदन करि दंडौत बिहारी कौ मुख जोवैं॥

करैं भावना बैठि स्वच्छ थल रहित उपाधा।
 घर घर लेइ प्रसाद लगैं जब भोजन स्वाधा॥
 संग करैं भगवत रसिक कर करुवा गूदरि गरें।
 वृंदावन बिहरत फिरैं जुगल रूप नैननि भरें॥

॥ अष्टपदी ॥

(38)

प्रथम दरस गोबिंद रूप के प्रान पियारे।
 दूजे मोहन मदन सनातन सुचि उरधारे॥
 तीजें गोपीनाथ मधू हंसि कंठ लगाये।
 चौथे राधारमन भट्ट गोपाल लडाये॥
 पाँचें हित हरिबंस सुबल्लभ राधा।
 छठयें जुगलकिसोर व्यास सुख दियौ अगाधा॥
 सातें श्रीहरिदास के कुंजबिहारी हैं तहाँ।
 भगवत रसिक अनन्य मिलि बास करहु निधिवन जहाँ॥

॥ छप्पै ॥

(39)

बिबि तनु व्यापक बिपुल प्रेम बस कीने दंपति।
 सेवत सहचरि रूप सहज नैननि निज संपति॥
 मीन केत ऐस्वर्य सुमन सर सारंग चारी।
 जक्त पूज्य हेरम्य सर्वसुख मंगलकारी॥
 आचारज भगवत रसिक कहैं गूढ गुन धाम के।
 बिस्व बिदित आनंद में पाँच रूप रति काम के॥

॥ कुंडलियाँ ॥

(40)

चेला काहू के नहीं गुरु काहू के नाहिं।
 सखी लडैती लाल की रहें महल के माहिं॥
 रहें महल के माहिं टहल सब करैं निरंतर।
 दंपति अति अकुलाहिं पलक कहुं परै जु अंतर॥
 भगवत भगवत कहैं करैं नहिं हम बिन केला।
 ताते हम परिहरे देह मानी गुरु चेला॥

(41)

हम सिष स्यामा स्याम के गुरु हम स्यामा स्याम।
ओत प्रोत अरपन कियो निज मन तनु धन धाम॥
निजमन तनु धन धाम निरंतर अंतर नाहीं।
निसि दिन दुख सुख संग असुचि सुचि घर वन माहीं॥
नश्वर नेह निमित्त देह नाते सों उपसम।
भगवत हमरे प्राँन सदा भगवत के हैं हम॥

(42)

बीजा जर नहिं प्रेम के उपजे सहज सुभाव।
चोरी जोरी दर्व सों मिले न दाव उपाव॥
मिले न दाव उपाव रूप गुन जस प्रताप बल।
भक्ति ज्ञान वैराग्य सीप ज्यों परै स्वाति जल॥
भगवत नित्य बिहार नैन संकर का तीजा।
जाति बर्न कुल धर्म कर्म राखत नहिं बीजा॥

(43)

दीपक सिर काजर धर्यों मधवा तनु भग भूरि।
उदधि बाडवानल उदर धर्यो न कीनो दूरि॥
धर्यो न कीनो दूरि कंठ संकर बिष धार्यो।
विष्णु हृदय भृगु चरन धर्यो फिरि ताहि न टार्यो॥
ससि उर धर्यो कलंक विदुषजन जानै धीपक।
भगवत रसिक समर्थ तजी लज्जा भय दीपक॥

(44)

अवनी पवन अकास जल अग्नि सिंधु ससि भानु।
क्वारी कुररि कपोत अलि गज मृग मीन सुजानु॥
गज मृग मीन सुजान सर्प अजगर मह माछी।
भृंगी देह पतंग सीख सिसु मकरी आछी॥
बारमुखी सरकार दत्त गुरु कीने कवनी।
निर्भय भगवत रसिक अनुद्यम बिहरत अवनी॥

॥ चौबोला ॥

(1)

श्री भगवत रसिक बिहारी नित्य।

निसिदिन सेवत छाँडि निमित्त॥

अर्पन कीन्हो मन बुधि चित्त।

तनु धन जोबन जानि अनित्य॥

॥ कुंडलियाँ ॥

(2)

जहाँ देखें तहाँ आपनो इष्ट धर्म गुरु धाम।

कारन कारज जगत में परिपूरन रति काम॥

परिपूरन रति काम समुझि समता जिन लीनी।

निंदा अस्तुति सुपरि बिषमता बुधि तजि दीनी॥

सत्रु मित्र नहिं कोइ ऊँच नहिं नीच कोइ तहँ।

सो घट भगवत रसिक स्याँम स्याँमा संतत जहँ॥

(3)

गावैं हम सोई करैं सहज लाडिली लाल।

करैं लाडिली लाल सों हम गावैं तत्काल॥

हम गावैं तत्काल सूत दुहुँ दिसि कौ ऐसौ।

बुध जन लेहु बिचार कमल दिनकर कौ जैसौ॥

लीला ललित बिहार स्याँम स्याँमा मन भावैं।

भगवत रसिक अनन्य उपासक अनुदिन गावैं॥

(4)

जहाँ कृष्ण राधा तहाँ तहँ राधा तहँ कृष्ण।

न्यारे निमिष न होत दोउ समुझि करौ यह प्रश्न॥

समुझि करौ यह प्रश्न दोउ घन दामिनि जैसे।

सहज सुभाय सुतंत्र निरंतर बिहरत तैसे॥

भगवत रसिक अनन्य बिना कोइ जात नहीं तहँ।

दंपति संपति सहित मदन रस रंग भरे जहँ॥

(5)

कोउ सुकिया कोउ परकिया कलप किये मत-बादि।
जोरी भगवत रसिक की नित्य अनंत अनादि॥
नित्य अनंत अनादि लोक तें रीति बिलक्षण।
श्रुति स्मृति बिलगाय देखि अनुभव के अक्षण॥
सहज प्रेम माधुर्य रहत अनुरागे दोऊ।
ललिता सखी प्रसाद बिना तहँ जात न कोऊ॥

(6)

नाहीं द्वैताद्वैत हरि नहीं बिसिष्टाद्वैत।
बँधे नहीं मतबाद में ईश्वर इच्छा द्वैत॥
ईश्वर इच्छा द्वैत करें सबही कौ पोषन।
आप रहें निर्लेप भक्त सौ मानै तोषन॥
भगवत रसिक अनन्य संग डोलैं गलबाहीं।
करैं मनोरथ सिद्धि उचित अनुचित कछु नाहीं॥

(7)

अवतारी भर्ता सु प्रभु नित्य बिहारी एक।
भक्त भाव पूरन करै धरि अवतार अनेक॥
धरि अवतार अनेक घाट गंगा के जैसें।
जहाँ जो करै निवास ताहि तहँ तोषै तैसें॥
भगवत रसिक अनन्य सुहृद सब के हितकारी।
सेवै अपनो इष्ट परम पूरन अवतारी॥

(8)

भेदा-भेद बिरोध नहिं परें सुमति उरधार।
गीता श्रीभागौत सों मिलि के बचन उचार॥
मिलि कें बचन उचार समझ अपने मन माहीं।
आचारज गुरु इष्ट बास्तव में दुइ नाहीं॥
भगवत रसिकन संग सर्व भ्रम कीजे छेदा।
हाटक मय हरि रूप पारषद इतनोइ भेदा॥

(9)

हरिजन हिजरा हुरकिनी सती सूरमा सोइ।
प्रगट होंहि सब जाति में इनकी जाति न कोइ॥
इनकी जाति न कोइ कृपन दाता दोउ देखौ।
दारिद्री धनवंत गुनी निगुनी जु बिसेखौ॥
भगवत रूप कुरूप जसी अजसी की लरजन।
साधन सिद्ध न होय धोय-सिल हीरा हरि जन॥

(10)

माया जीवै बस करै भक्ति करै बस ईस।
भेद बतावै भागवत गावै सप्तातीस॥
गावै सप्तातीस सुनें समझें नहिं प्रानी।
झगरि करें मतबाद बाद ही आयु बिहानी॥
सुत बित बनिता सदन कियो निश्चय निज काया।
ते क्यों पावें पार परे भगवत की माया॥

(11)

खावै नहिं पछिताइ सो खावै सो पछिताइ।
यह जग लाडू भूत कौ दुहूँ भाँति दुखदाइ॥
दुहूँ भाँति दुख दाइ खाज ज्यों नखन खुजावत।
रोग भोगते होय सिस्न रसना हित धावत॥
श्रीभगवत उर धारि भक्ति करि मनको दाबै।
गुरु आज्ञा अनुकूल रहै नहिं बेदन खावै॥

(12)

जो उपदेसै और कों सो नहिं मानै आप।
दैखौ जगत प्रवीनता ठगै आपकौ आप॥
ठगै आपकौ आप बिषै स्वारथ नहिं छूटें।
परमारथ पर हेत बके पर धन कौ लूटें॥
पंडित संत महंत गुसाईं परमहंस जो।
लोभ ग्रसे सब लोग नहिं भगवत सहाय जो॥

(13)

विद्या रूप महत्व कुल धन जोबन अभिमान।
षट कंटक देखै जहाँ रहै न भक्ति निदान॥
रहै न भक्ति निदान स्वाँग सब नगर नारि के।
बिषयिन हाथ बिकाय नहीं रिझवन भर्तार के॥
जग बंचन के हेत सर्व गुन सीखै जिद्या।
भगवत भक्ति बिहाय कहा कीनौ पढि विद्या॥

(14)

सतगुरु सब्द सुस्वाति जल सिष्य सीप हिय होय।
सकुचि मीन टक्कर लगै तब वह मुक्ता होय॥
तब वह मुक्ता होय सजाती संगति जैसे।
नातर तोय कौ तोय होय नहि मुक्ता ऐसे॥
भगवत रसिक अनन्य बधू नव गर्भ धरें उर।
सदा सहायक सासु स्वामियाँ जानौ सतगुरु॥

(15)

भरता कै द्वै भामिनी वसैं एकही गाँव।
सेवा साधै ओसरिन तोरैं पति के पाँव॥
तोरैं पति के पाँव सौतियारौ सौ मानै।
ऐसेहि सब मत बाद करें खंडन मत आनै॥
आचारज अभिमान आपकौ मानें करता।
तजि बिरोध नहिं भजहिं आपनौ भगवत भरता॥

(16)

सेवत स्वारथ बिषय सुख पोषत देखें देह।
दुर्लभ बिरले जगत में जिनकें नवधा नेह॥
जिनकें नवधा नेह गेह धन दारा नाहीं।
जोग ज्ञान बैराग्य भक्ति प्रेमा उर माहीं॥
मिलहि न मरमी जुगल ढूँढि बल्लभ दुख खेवत।
पार पहुँचे सूर छिपै नव कुंजन सेवत॥

(17)

आवत भगवत भक्ति निधि जहँ मैं मेरी नाहिं।
पोषत अपनौ जानि सब बँधे न काहू माहिं॥
बँधे न काहू माहिं स्याँम स्याँमा गुन गावैं।
अन इच्छित जग रीति प्रीति रस-रीति लडावैं॥
गुनतें न्यारे रहत सहत जो स्याँम सहावत।
बल्लभ जीवन जुगल भक्ति भगवत जब आवत॥

(18)

जो कछु लिख्यो ललाट में दुख सुख देही संग।
भुगतैंगौ जहँ जाइगौ यह सिद्धांतु अभंग॥
यह सिद्धांत अभंग तजत क्यों धीरज प्रानी।
वृंदावन परिहरै प्रिया प्रीतम रजधानी॥
भगवत नित्य बिहार स्याँम स्याँमा की गैल छु।
भूख प्यास सहि रहे आनि बीतै सिर जो कछु॥

(19)

आँधे के सिर संप्रदा नकटे कैसौ पंथ।
ठगा-ठगी संसार में समुझि लगौ संग कंथ॥
समुझि लगौ संग कंथ कहौ जब भामिनि ऐसे।
निज प्रताप जस चहें भलाई उभै न तैसे॥
रस स्वादी कोउ मिलै जाहि गुन दोष न बाँधे।
भगवत द्रष्टा होइ करौ सेवन तजि आँधे॥

(20)

माँछी माँछर मांगने मूँसे बांदर चोर।
काँटे दीमक जीवका जागा दस दुख घोर॥
जागा दस दुख घोर बास क्यों कीजैं बन में।
असन बसन बिनु मिलें रहै ना धीरज मन में॥
भगवत रसिब अनन्य मिलन दुस्तर श्रुति साछी।
बिहरत स्याँमा स्याम जहाँ नाहिं माँछर माँछी॥

(21)

जाकों दरसन इत मिलै ताकों दरसन उत्त।
जाकों दरसन इत नहीं ताकौ मिलै न उत्त॥
ताकौ मिलै न उत्त फिरें भटकत सब ठौरनि।
मन कौ मैल न जाइ खात घर घर के कौरनि॥
भगवत रसिकन संग मुकुर लौं मंजैं ताकौ।
तब निज बदन दिखाय स्याँम स्याँमा कौ जाकौ॥

(22)

गेरा मासे कौ गुरू ताकौ सिष सब कोय।
ताकी आस उपासना करें निरंतर सोय॥
करैं निरंतर सोय और नहिं आवें मन में।
बाल वृद्ध नर नारि सुभाइक तृष्णा धन में॥
भगवत रसिक बिहाय कियो सब के उर डेरा।
गेही कहा बिरक्त मिलें पावैं सुख गेरा॥

(23)

पसु रूपी संसार सब बँध्यो धर्म रजु मांहि।
बर्णाश्रम दरसन छहू छूटि सकत कोउ नाहिं॥
छूटि सकत कोउ नाहिं संप्रदा पंथ गरुरे।
निज खूँटा खर खात तजत मैदा घृत बूरे॥
स्याँमा स्याँम बिहार नित्य माधुर्य परम रसु।
भगवत तिनहिं न देत ताडना देत जानि पसु॥

(24)

आसा जाकी जहँ बसी, तहँ ताही कौ बास।
गेही होय बिरक्त कै कै स्वामी कै दास॥
कै स्वामी कै दास महातम सब कहिबे कौ।
भगवत रसिक अनन्य बचन जुग जुग गहिवे कौ॥
तजैं निवृति प्रवृति रहै नित तिन के पासा।
नित्य बिहार अखंड मिलन की जिन कौ आसा॥

(25)

कौवा धोये हंस नहिं होइ न बछरा स्वान ।
रासभ तें हय होइ नहिं जो धोवें भगवान ॥
जो धोवें भगवान साखि देखौ दुर्योधन ।
हरि आए बनि दूत गए फिरि भयो न बोधन ॥
भगवत रसिक अनन्य होय नहिं बाँभन नौवा ।
गुन सुभाव नहिं मिटै हंस संगति करि कौवा ॥

(26)

काटैं कूकर बावरौ जाकौं लागैं भूत ।
करैं अमल तहँ आपनो दाबि परायो पूत ॥
दाबि परायो पूत प्रेम की यह गति जानौ ।
जिय तैं ईस्वर होय साखि ब्रज-बधू बखानौ ॥
भगवत रसिक अनन्य होय अद्भुत रस चाटैं ।
स्याँमा स्याँम बिहार नित्य तिहि काल न काटै ॥

(27)

जोतिष वैदिक व्याकरणे साबर श्रोदय कोक ।
सामुद्रिक पिंगल पढै जस प्रताप तिहुँ लोक ॥
जस प्रताप तिहुँ लोक जोग नृप नीति बखानौ ।
गांधर्वी पुनि शास्त्र पाक विधि सिल्प सुजानौ ॥
चौदह विद्या निपुण नारि नर नट के कौतिक ।
भगवत रसिक बिहार दिखावैं सो वर जोतिक ॥

(28)

साँचौ नहिं निज धर्म कोउ कासों करिये प्रीति ।
ब्यभिचारी सब देखिये आवत नहिं परतीति ॥
आवत नहिं परतीति दीजिये काकों निज धन ।
मन माफिक नहिं मिलै खोजि देखे बस्ती बन ॥
भगवत रसिक अनन्य संग की सहै न आँचौ ।
कूकर हाड चबाय सिंह मारै गज साँचौ ॥

(29)

घर घर में गुरु वैद्य सब बिनु गुरु वैद्य न कोय।
औषधि मंत्र बतावही शीघ्र सिद्ध यह होय॥
शीघ्र सिद्ध यह होय बहुत भाँतिन अजमायो।
कह्यो हमारौ करौ लेव सुख मन कौ भायौ॥
रोगी नर गुरु हीन करैं कह काकौं परिहरि।
निश्चै भगवत करै एक नहिं डोलै घर घर॥

(30)

थिर नाही मांगौ कहा तुम सब दैन समर्थ।
भगवत रसिक अनन्य के केलि बिलोकन अर्थ॥
केलि बिलोकन अर्थ और सुख नस्वर देखें।
राज जोग तिय भोग मुक्ति पद आदि बिसेखें॥
बर दैकें बहु ठगे सकामी भक्त जाहु फिरि।
सुख निधि स्याँम सुजान विना स्याँमा तुम नहि थिर॥

होरी धमार

॥ राग काफी-चौपाई नागर ॥

(1)

श्री भगवत रसिक अनन्य कृपा औसर निज होरी।
दरसौ निज सुख हिये जथामति गावत सोरी॥
मंदिर नेह निकुंज मदन अवकास जहाँ री।
प्यारी पिया सिंगार साज सुख लसत तहाँ री॥
होरी खेलत चाह चोप निज हिय में आनी।
सकल सौंज सजि संग सखी निज ललित सयानी॥
अपनी अपनी ओर सखी परिकर मिलि राजैं।
चोवा अतर अबीर अरगजा अंबर साजैं॥
चौप चतुर चित चाह उमंगि सन्मुख दोउ आए।
अबीर गुलाल उडाय सखिन गुन गाय सुनाए॥
सत बल बैस उदार सैन करि नैन दुरावैं।
मंद मधुर मुसक्याय मोरि मुख चितै चुरावैं॥

मौज मनोजनि भरे चोज रस बैनु बजावैं।
 अपनी चोट चलाइ सखिन कर ओट बचावैं॥
 गोरी गुन गंभीर धीर सखि आगै दैकैं।
 घूँघट नैन उठाइ कुमकुमा मेंलत लैकैं॥
 प्रीतम चतुर खिलार इतै उमंगे रस लैकैं।
 अपनो तकत उपाय चतुर सखि आगैं दैकैं॥
 सजै रंग रस उमंगि छबीली सन्मुख आई।
 लावनि रूप निधान लाल उमंगे अकुलाई॥
 प्यारी मुख छबि छटा कोर कुच पिय कौं दरसी।
 मौज मनोजनि ललक परस रुचि हिय में सरसी॥
 प्यारी रंग रस बोरि मोरि मुख दूख दिखावत।
 छल बल तकत उपाय नेंकु पिय परस न पावत॥
 नैन सैन बर बैन मैन मन मोद बढ़ावत।
 अपनी अपनी ओर सुघर चूडामनि गावत॥

हाव भाव मनुहार करत पिय तब श्रम मेटे।
 भए मनोरथ सिद्ध उमंगि हंसि भुज भरि भेंटे॥
 आलिंगन कुच परस चूमि मुख निरखत दोऊ।
 परिरंभन सुख कोंक-कलनि मिलि बिलसत सोऊ॥
 सेज समर सनि रहे फाग खेलत मन मानी।
 अपने अपने मेल मिलीं सब सखी सयानी॥
 छिन छिन रति बिपरीति कसत हंसि हुलसि किसोरी।
 नील पीत पट लसत सुरत संगम सुख जोरी॥
 रूप भरे गुन भरे मदन मन मौजनि सोऊ।
 गति मति थकि सनि रहे प्रेम रंग रस मैं दोऊ॥
 भीजें नेह निहारि परस सखि हुलसैं ऐसे।
 सोहत नख-सिख अंग रंग रस विलसैं जैसे॥
 अंसन परि भुज दिये मैन मन ललक न मुरकी।
 झलकत श्रमकन बदन कुसुम अलकावलि दुरकी॥

कसन बसन सखि सहज निरखि मदमाते घूमे ।
 नैन बैन भुज जोरि उमंगि हँसि हँसि मुख चूमे ॥
 इहि रस नित्य निकुंज मत्त मिलि मौजनि बिलसैं ।
 छबि की छटा तरंग अंग अंगनि तें हुलसैं ॥
 दुर्लभ अगम अगाध नेति कहि निगमन गायो ।
 भगवत रसिक प्रसाद बिहारी बल्लभ पायो ॥
 फागुन मास उदार सुक्ल सुभ पूरनमासी ।
 श्री गुरु निज त्यौहार निरखि सुख आनंद रासी ॥

॥ इति श्री भगवतरसिक देवजी की बानी संपूर्णम् ॥

श्री भगवत रसिकदेव जू की बाणी का सत्संग

(1) श्री विहारीजी महाराज ही नित्य हैं और सब भगवत स्वरूप इनही की कला से उत्पन्न हैं ये ही सबके रचयिता, पालन करने वाले और नष्ट करने वाले हैं, सबके नियन्ता हैं, स्वतंत्र हैं, सब सामर्थ्यवान और शरण आये को अभय करने वाले तथा परम हित करने वाले हैं।

(2) संसार में धन दौलत की ही महानता है। पैसों से ही गुरु-शिष्य, पति-पत्नि का नाता है, जोगी, तपी, विरागी, ज्ञानी, गृही, सन्त-महन्त सब पैसों के पीछे ही दौड़ रहे हैं। पैसों के लिये ही शिष्य बनाते हैं, पैसों के लिये ही हरि मन्दिर बनाते हैं सेवा पूजा करते हैं, पैसों के लिये ही वक्ता बनकर कथा भागवत सुनाते हैं नाचना, गाना, चटकीली काव्य रचना आदि पैसों के लिये ही की जाती है जबकि पैसे के स्पर्श मात्र से साधु को पाप लग जाता है और इष्ट से विमुख हो जाना पड़ता है परमार्थ का बहुत बड़ा द्रोही है।

✓(3) लोभ ही सब पापों की जड़ है। इसी से सब पाप कार्यान्वित होते हैं। यदि श्री विहारी जी महाराज से मिलने की इच्छा है तो तन, घर, धन तथा बहू-बेटों से भी अनासक्त हो जाओ।

✓ (4) करुआ जी का जल अति ही पवित्र है जिसके पीने से अपने मन में प्रीया-प्रीतम का स्मरण होता है और निकुंज महल की टहल प्राप्त करने का अधिकारी बनता है।

(5) यदि ऋषभ देव से पिता, मन्दालसा सी माता, कपिल से पुत्र, प्रह्लाद से मित्र, बिदुर से भाई, द्रोपदी सी पत्नि, श्री नारद जी से गुरु, अम्बरीष से पति और पृथु से राजा मिल जाँय तो जीव अनायास ही भवसागर से पार होकर आनन्द रस में निमग्न हो जाता है।

✓ (6) विवाह-शादी, कनागत, मरण महोत्सव, राज्य धान तथा ग्रहदान का अन्न खाने से भजन में बहुत ही बड़ी हानि होती है।

(7) अनन्य भक्ति के सामने जप, तप, तीर्थ, दान, व्रत, जोग, जज्ञ, आचार आदि सब निअर्थक हैं।

(8) भगवत भक्त सदैव अपने इष्ट के आधीन रहता है अपने इष्ट की रुचि में अपनी रुचि मिलाये रहता है अपना मन भाया न मानता है और न कुछ करता है।

(9) झूठ कपट कर अपने ही स्वार्थ सिद्ध करने वाले कपटी लोगों का संग कभी भी नहीं करना चाहिये। चाहे वह कितना भी विद्वान और सामर्थ्यवान है।

(10) श्री प्रीया जू ही मेरी प्रान स्वामिनी हैं जिनके बल पर मैंने लोक बेद तथा कुल की मर्यादा का परित्याग कर दिया है। जो विहारीजी महाराज की प्रान जीवन है अपने तन मन प्रान न्योछावर कर अधरामृत का पान करते रहते हैं। वे ही मेरी सर्वोपरि सुख देने वाली सदैव सहायक हैं।

(11) नित्य वृन्दावन सदैव हमारे हृदय में ही विराजमान रहता है जहाँ प्रीयालाल नित्य विलास रस में छके रहते हैं जहाँ माया काल की पहुँच नहीं है ऐसी स्वच्छ अलौकिक भूमि है जहाँ मन पूर्णरूपेण शान्त हो जाता है भावुक रसिकजन भाव रूपी नेत्रों से सदाँ अवलोकन करते रहते हैं। सरस पदों का गायन ही जमुना जल तथा विहारीजी के दरसन हैं उसी सुख से रोम-रोम प्रफुल्लित तथा पुलकायमान होना ही पुलिन है प्रीया जू साधक के हृदय में ही नित्य लीला का अनुभव कराती रहती हैं।

(12) जो सेवक अपना तन, मन, धन तथा अहंकार का परित्याग कर अपने इष्ट की रुख लेकर परम पवित्र हृदय से सेवा करता है वही सच्चा सेवक है उसी को प्रीया प्रीतम रीझ कर अपने गूढ रहस्यों का भेद दरसा देते हैं उसके संचित

कर्म संस्कार अर्थात् प्रारलब्ध के भोग के ढेर को नष्ट कर उसको दुख और अवगुणों से रहित कर पवित्र बनाकर अपना लेते हैं। अनन्य रसिकों का मत है अपने मनमानी क्रिया को छोड़कर वे अपने इष्ट की रुचि के अनुसार क्रिया करते हैं। जो श्रीहरि करते हैं उसमें सुख मानते हैं और जामें इष्ट को सुख मिलै वही क्रिया करते हैं।

(13) अज्ञानता रूपी भूत के आवेश में आकर ये प्राणी न तो श्री विहारी जी के स्वरूप तथा स्वभाव को जानते हैं और न उनको कर्त्ता मानते हैं अपने तन मन के द्वारा किये कृत्यों को ही सब कुछ मानते रहते हैं तब ही तो प्राणी दुख भोगते रहते हैं देही तो मायिक है निमित्त मात्र है, जड़ है, क्षणिक है, जागतिक है देही में मन देना ही तो संसार है। देही झूठी श्रीहरि साँचे हैं। साँच झूठ में छिपा हुआ है। झूठी देही में मन न देकर साँचे श्रीहरि में मन देने से ही सत्य को प्राप्त किया जा सकता है।

(14) श्रीहरि गुरु बार-बार समझावें हैं फिर हू यह प्राणी उनका कहना न मानकर अपनी मनमानी बात करता रहता है तब अपने ही किये का फल इसको भोगना पड़ता है दुख से चिल्लाता है और दैव को दोष देता है। और ईश्वर की इच्छा मानता है किन्तु

ईश्वर की इच्छा बिल्कुल नहीं है चलनी में गइया काढे दोष हरि को देवें हैं। उसका कर्म संस्कार बनता रहता है और फल (दुख-सुख) भोगता रहता है।

(15) जो देही को मानने वाले हैं वे संसार से छूट नहीं सकते कभी भी श्रीहरि को प्राप्त नहीं कर पायेंगे। अपने नित्य आत्म स्वरूप को पहिचानै उसी में मन देवै तो सुखी होय इस शरीर को अपना कुछ न मानै यह तो मृग तृष्णा है। इस शरीर की ही जाति-कुजाति ऊँचा-नीचा, अच्छा-बुरा मानकर निज स्वरूप को भूलकर यह प्राणी इसी को अपना आत्मस्वरूप समझकर इसी में मन दिये रहता है इसी के लिये सब कुछ करता रहता है। देही में आसक्त होना ही तो संसार है विमुखता है।

(16) जगत प्रतिष्ठा-सूकर की विष्टा-

जो परमार्थ को पीठ देकर लोक व्यवहार, मान-बड़ाई तथा प्रतिष्ठा में लगे रहते हैं अपनी प्रतिष्ठा ही उनको प्यारी है वे काहे के समझदार हैं श्रीहरि के सच्चे भक्त तो लोक प्रतिष्ठा को सूकर (सूअर) की विष्टा के समान त्याग कर सदाँ श्रीहरि के भजन में लगे रहते हैं। आप अमानी रहकर दूसरों को मान देते रहते हैं "विहारीदास औगुन गनै मान सहै संकोच।"

(17) श्री विहारीजी महाराज का नित्य स्वरूप है। और अवतार लेने वाले भगवत स्वरूप निमित्त माने जाते हैं। श्री स्वामी हरिदास जू महाराज की उपासना तो नित्य की है निमित्त की नहीं निर्गुण सगुण भी निमित्त के ही अन्तर्गत हैं इन दोउन से परे श्री स्वामी जी की उपासना है। तन, मन, धन, चित्त, बुद्धि तो अनित्य है इन सबसे मन निकलै तब श्री बिहारीजी महाराज की उपासना सम्भव हो सकती है।

✓ (18) भक्ति के ग्रन्थों में श्री भागवत पुराण सबसे श्रेष्ठ है। महारास के पाँच अध्याय श्री भागवत के प्राण माने जाते हैं लेकिन श्री स्वामी जी महाराज की उपासना तो यहाँ से शुरू होती है श्री भागवत से आगे की उपासना है। पहिले भक्त के मुख से श्री भागवत और श्रीमदभगवत गीता का श्रवण करो फिर नवधा भक्ति करो फिर श्री स्वामी जी की उपासना में पग धरो।

(19) घट-घट में, कण-कण में, जल-थल में सभी जगह अपने ही विहारी जी महाराज का प्रभाव, वैभव, धर्म, धाम आदि के दर्शन करो सबमें वे ही व्यापक होकर नित्य निरन्तर विहरत रहते हैं। "जैसे ब्रह्म जगत में कहूँ न खाली कोय, तैसें गौर श्याम सखियन मयी, तन मन प्रान समोय।" जब सबमें ही श्री

विहारीजी महाराज समाये भये हैं तो सब ही समानता के ही स्वरूप हैं कोई ऊँचा-नीचा, अपना-पराया, शत्रु-मित्र, छोटा-बड़ा तथा निन्दा-स्तुति लायक कोई भी नहीं सबही समान हैं और सबही हमारे हैं हम सबके हैं जो विषधारी और अति ही भयंकारी और दुखदाई जीव हैं हमको उनसे निर्भय रहना है क्योंकि उनके अन्दर भी विहारीजी हैं और उनको निमित्त बनाकर जो कुछ करेंगे सो विहारीजी ही करेंगे। वे हमारे परम हितकारी हैं और उनका हित करने का अटल ब्रत है। फिर भय किसका?

(20) जिन साधकों के मन में अहंकार और ममता मिट जाती है उन्हीं के हृदय में भक्ति रूपी परम निधि उदय होती है। अपना जानकर सबका तोषण पोषण करते हैं लेकिन आसक्त किसी में भी नहीं होते हैं, जगत के प्रेम और व्यवहार को त्यागकर अपने प्रिया-प्रीतम के गुणगान करने में ही लगे रहते हैं। विहारीजी का कृपा प्रसाद मानकर सुख-दुख, लाभ-हानि तथा योग-वियोग को सहन करते रहते हैं।

(21) सच्चे अनन्य जन तो संसार में कहीं भी दिखाई नहीं देते हैं सब जगह व्यभिचारी मतवालों की ही भीड़ मिलती है हम किससे प्रेम करें। भक्त और विरक्त सब देख लिये हमको

कोई भी हमारे मन के माफिक नहीं मिला किसको अपनी वस्तु को प्रदान करें। अनन्यता की आँच को सहन करने की उनके हृदय में सामर्थ्य ही नहीं है।

(22) जैसे बाँदौ, अमर बेलि और मधुमक्खी सभी वृक्षों में नहीं मिलती हैं। गोरोचन जैसे सब गायों में नहीं होती, कस्तूरी सब मृगों में नहीं मिलती, जैसे मणि सभी सर्पों में नहीं होती और मुक्ता सभी हाथियों में नहीं मिलता उसी प्रकार नित्यविहार के दृष्टा सभी रसिक अनन्य नहीं होते नित्यविहार न भूमि पर है, न आकाश में, न पाताल में और न इनसे परे कहीं है यह तो रसिक अन्यनों के हृदय में ही स्फुटित होता है।

✓ (23) जैसे मयूर जाति का पक्षी आकाश में सुदूर मेघ मंडल का भेद जान लेता है और कुहुकने लग जाता है उसी प्रकार नित्यविहार का अनुभव रसिक अनन्य के हृदय में ही होने लगता है।

(24) नित्यविहार की लीला ही श्यामाश्याम के मन को अत्यन्त ही प्यारी लगती है छिन भर का अन्तर भी सहन नहीं है रसिक अनन्य उपासक नित्यविहार का गायन करते रहते हैं। ★

